वैज्ञानिकों की बातें

शुकदेव प्रसाद

शुकदेव प्रसाद

वैज्ञानिकों की बातें

शुकदेव प्रसाद

अमरसत्य प्रकाशन
109, ब्लॉक बी, प्रीत विहार
दिल्ली-110092

 / प्रथम संस्करण : 2002
मुद्रक : एस०एन० प्रिंटर्स, दिल्ली-110032
मूल्य : पचहत्तर रुपए

Vaigyanikon Ki Batein by Shuk Deo Prasad
Price : Rs. 75.00

दो शब्द

सामान्य जन-मानस में वैज्ञानिकों के प्रति एक आम धारणा यह है कि उनका जीवन एकदम नीरस एकांतिक और अलग-थलग किस्म का होता है। पर पुस्तक के ये प्रसंग इस तस्वीर का दूसरा पहलू पेश करते हैं। वास्तव में वैज्ञानिकों का जीवन भी सामाजिकता और हास-परिहास से एकदम परिपूर्ण होता है और अवसाद-विषाद भरा भी, हमारी-आपकी ही तरह। उनके भी सामाजिक सरोकार और उत्तरदायित्व होते हैं। उन्हीं के साथ वे भी जीते और मरते हैं। पुस्तक में समाहित प्रसंग वैज्ञानिकों के बारे में व्याप्त भ्रांत धारणाओं को निर्मूल करते हैं। उनकी भी ज़िंदगी रोमांच से लबरेज है और हर्ष-विषाद से सराबोर भी, ठीक हमारी ही तरह।

आइए, इन प्रसंगों के जरिए वैज्ञानिकों के जीवन में झांके और देखें, कितना बहुरंगी और दिलचस्प है उनका जीवन!

महान् पुरुषों का जीवन सदा ही प्रेरणास्पद और प्रेरक रहा है। कदाचित् इसी नाते हम विभूतियों की जीवनियां पढ़ते आए हैं। अपनी प्रयोगशाला रूपी तपोस्थली में निष्काम भाव से तल्लीन वैज्ञानिक भी हमारे समाज के अंतरंग प्राणी और अभिन्न अंग हैं - मानवीय संस्पर्शों से पूर्णतः निमज्जित।

महान् विज्ञान विभूतियों के जीवन से चुने हुए ये प्रेरक प्रसंग निस्संदेह आपके जीवन में ऊर्जा एवं उत्साह का संचार करेंगे जिससे जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलेगी। पुस्तक की रचना का यही मंतव्य भी है।

34, एलनगंज
इलाहाबाद--211002

- शुकदेव प्रसाद
निदेशक,
विज्ञान वैचारिकी अकादमी

वैज्ञानिकों की बातें

शुकदेव प्रसाद

अमरसत्य प्रकाशन
109, ब्लॉक बी, प्रीत विहार
दिल्ली-110092

 / प्रथम संस्करण : 2002
मुद्रक : एस०एन० प्रिंटर्स, दिल्ली-110032
मूल्य : पचहत्तर रुपए

Vaigyanikon Ki Batein by Shuk Deo Prasad
Price : Rs. 75.00

दो शब्द

सामान्य जन-मानस में वैज्ञानिकों के प्रति एक आम धारणा यह है कि उनका जीवन एकदम नीरस एकांतिक और अलग-थलग किस्म का होता है। पर पुस्तक के ये प्रसंग इस तस्वीर का दूसरा पहलू पेश करते हैं। वास्तव में वैज्ञानिकों का जीवन भी सामाजिकता और हास-परिहास से एकदम परिपूर्ण होता है और अवसाद-विषाद भरा भी, हमारी-आपकी ही तरह। उनके भी सामाजिक सरोकार और उत्तरदायित्व होते हैं। उन्हीं के साथ वे भी जीते और मरते हैं। पुस्तक में समाहित प्रसंग वैज्ञानिकों के बारे में व्याप्त भ्रांत धारणाओं को निर्मूल करते हैं। उनकी भी ज़िंदगी रोमांच से लबरेज है और हर्ष-विषाद से सराबोर भी, ठीक हमारी ही तरह।

आइए, इन प्रसंगों के जरिए वैज्ञानिकों के जीवन में झांके और देखें, कितना बहुरंगी और दिलचस्प है उनका जीवन!

महान् पुरुषों का जीवन सदा ही प्रेरणास्पद और प्रेरक रहा है। कदाचित् इसी नाते हम विभूतियों की जीवनियां पढ़ते आए हैं। अपनी प्रयोगशाला रूपी तपोस्थली में निष्काम भाव से तल्लीन वैज्ञानिक भी हमारे समाज के अंतरंग प्राणी और अभिन्न अंग हैं - मानवीय संस्पर्शों से पूर्णत: निमज्जित।

महान् विज्ञान विभूतियों के जीवन से चुने हुए ये प्रेरक प्रसंग निस्संदेह आपके जीवन में ऊर्जा एवं उत्साह का संचार करेंगे जिससे जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलेगी। पुस्तक की रचना का यही मंतव्य भी है।

34, एलनगंज
इलाहाबाद-211002

- शुकदेव प्रसाद
निदेशक,
विज्ञान वैचारिकी अकादमी

अनुक्रम

* * *

परीक्षा

प्राचीन भारत के प्रसिद्ध रसाचार्य नागार्जुन को औषधि-निर्माण-कार्यों के लिए एक बार एक सहायक की आवश्यकता हुई। इस कार्य-हेतु उनके पास कई शिष्य आगे आए। आचार्य ने परीक्षा के लिए दो युवकों को एक पदार्थ देकर दो दिनों में उसका रसायन तैयार कर लाने के लिए कहा।

दो दिन बाद एक युवक रसायन लेकर पहुंचा। गुरु ने पूछा-'रसायन तैयार करते समय कोई अड़चन तो नहीं आयी?'

शिष्य ने बताया-'अड़चनें तो अनेक आयीं। मेरी मां तेज बुखार में तड़प रही थी। पिता पेट-दर्द से व्याकुल थे। छोटे भाई के पैर की हड्डी टूट गयी थी। पर मैं तो अपनी साधना में लगा रहा।' गर्व से शिष्य ने सारी बात बता दी।

कुछ देर बाद दूसरा शिष्य भी आया और बोला-'आचार्यप्रवर, क्षमा करें, मैं रसायन नहीं तैयार कर सका।'

कारण पूछने पर उसने बताया-'यहां से घर लौटते समय मुझे रास्ते में एक बूढ़ा मिला जो बीमार होने के साथ असहाय और निर्धन था। दो दिन उसकी सेवा में बीत गए। अतः रसायन न तैयार कर सका। कृपया मुझे कुछ समय और दीजिए।'

आचार्य ने पहले युवक की ओर मुंह करके कहा-'तुम जा सकते हो। मैंने इस युवक को अपना सहायक रखने का निश्चय किया। रसायन जीवन-रक्षा के लिए होता है। यदि उसका निर्माता जीवन-रक्षा से विमुख हो जाए तो उसे कैसे योग्य समझा जा सकता है?'

उसूल की बात

प्रख्यात आयुर्वेदिक प्रतिष्ठान झंडू फार्मेसी के प्रवर्तक श्री झंडू भट्ट आदर्श वैद्य थे। एक बार सौराष्ट्र के वढवाग राज्य के ठाकुर साहब बाल सिंह जी बीमार हुए। उनकी चिकित्सा के लिए जामनगर से

झंडू भट्ट जी को बुलाया गया। दो महीने तक बराबर उपचार होता रहा। इस बीच कितने ही अन्य वैद्य और डॉक्टर भी आए और अपना उपचार आजमा कर, फीस लेकर चले गए।

एक दिन ठाकुर साहब ने भट्ट जी से कहा–'आप अपना बिल क्यों नहीं देते?' इस पर भट्ट जी ने कहा—'महाराज, जल्दी क्या है? आप अच्छे हो जाएं, फिर आप जो कुछ देंगे, स्वीकार करूंगा।'

समय बीतते क्या देर लगती है। ठाकुर साहब का रोग और भीषण रूप लेता गया और वे स्वर्गवासी हुए।

अन्य दरबारियों के साथ भट्ट जी भी श्मशान-यात्रा में गए और वहां से निवृत्त होकर बिना किसी सूचना के जामनगर चले गए। बाद में ठाकुर साहब की चिकित्सा एवं देखभाल के लिए राज्य की ओर से भट्ट जी को दो हजार रुपये का चेक भेजा गया और उसे स्वीकार करने का निवेदन किया गया।

मगर भट्ट जी ने चेक वापस करते हुए राज्याधिकारी को लिखा–'ठाकुर साहब थोड़े दिनों के मेहमान हैं, यह बात मुझे पता थी लेकिन रोगी की श्रद्धा न टूटे, इस नाते मैं अंत तक उनकी सेवा-सुश्रूषा करता रहा। मेरा उसूल है कि जो रोगी मेरे हाथों अच्छा नहीं होता, मैं उससे फीस नहीं लेता। अत: चेक वापस कर रहा हूं।'

भट्ट जी आदर्श वैद्य थे। व्यवसाय में भी नैतिकता की ज्योति उन्होंने जलाए रखी। तभी तो इतना बड़ा प्रतिष्ठान कायम कर सके।

सरल मार्ग

अलेक्जेंड्रिया का निवासी यूक्लिड एक ग्रीक गणितज्ञ और अध्यापक था। उसकी पुस्तक 'एलीमेंट्स' (ज्यामिति-मूल तथ्य) का अनुवाद दुनिया की हर भाषा में हो चुका है। उसे ज्यामिति का जनक माना जाता है।

एक बार यूक्लिड अलेक्जेंड्रिया के राजा टालेमी को गणित पढ़ा रहा था। टालेमी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। बड़े पशोपेश में टालेमी ने पूछा–'गणित को समझने के लिए क्या कोई सरल मार्ग नहीं है?'

यूक्लिड ने गंभीरतापूर्वक जवाब दिया–'यह सत्य है कि राजा-महाराजाओं के लिए बहुत सुन्दर राजमार्ग होते हैं लेकिन शिक्षा के लिए तो सभी को एक ही मार्ग से गुजरना पड़ता है।'

नैतिक आदर्श

आयुर्वेद के प्रणेता महर्षि चरक औषधियों की तलाश में जंगलों में अपनी शिष्य मंडली के साथ भ्रमण कर रहे थे। एक खेत में उनकी दृष्टि एक नये पुष्प पर पड़ी। कदाचित इससे पूर्व वैसा पुष्प देखने में नहीं आया था। वे चाहते तो थे पुष्प प्राप्त करना लेकिन मन धार्मिक संकट में था।

उनके एक शिष्य ने कहा–'गुरुदेव, आज्ञा हो तो पुष्प ले आऊं?'

'पुष्प चाहिए तो लेकिन खेत के मालिक की आज्ञा के बिना कैसे लिया जाय?' इस तरह यह चोरी मानी जायेगी।'

'गुरुदेव, किसी के काम की कोई वस्तु हो तो उसे लेना चोरी हो सकती है, लेकिन यह तो खेत के मालिक के किसी काम का नहीं है। अतः इसे लेने में कोई हर्ज नहीं और फिर आपको तो राजाज्ञा है कि आप कहीं से कोई भी वनस्पति ले सकते हैं।' शिष्य ने गुरु को मनाना चाहा।

लेकिन गुरु इन दलीलों में आने वाले नहीं थे। उनके आगे नैतिकता की दीवार जो थी। बोले–'प्रिय, राजाज्ञा और नैतिक जीवन में भेद है। यदि अपने आश्रितों की सम्पत्ति को स्वच्छंदता से व्यवहार में लाएंगे तो फिर लोगों में नैतिक आदर्श कैसे जागृत होंगे?'

इसके बाद गुरु और शिष्य तीन मील पैदल चलकर किसान के घर पहुंचे और उसकी आज्ञा लेकर वह पुष्प प्राप्त किया।

सूट या मुझे?

प्रसिद्ध नीग्रो वैज्ञानिक वाशिंग्टन कार्वर को अमेरिकी कांग्रेस ने एक बार विशेषज्ञों की सभा में आमंत्रित किया। जब कार्वर प्रस्थान करने लगे तो किसी मित्र ने सलाह दी-'आप राजधानी जा रहे हैं, कम से कम नया सूट तो बनवा लेते।'

कार्वर ने उत्तर दिया-'यदि वे लोग नया सूट चाहते हैं तो ट्रंक में एक बढ़िया-सा सूट रखकर भेज दो और यदि मुझे चाहते हैं तो जैसा मैं हूं, वैसा ही उनको स्वीकार करना पड़ेगा।'

मानवता की सेवा में

त्यूरिन विश्वविद्यालय (इटली) के रेडियोलॉजी-विशेषज्ञ मारियो पोंजियो ने कैंसर के इलाज की खोज में अपनी आहुति दे दी। अपने शरीर पर वह एक्स-किरणों के प्रभाव का अध्ययन करते। घातक किरणों की मार से पहले उन्हें बाएं हाथ की एक अंगुली कटानी पड़ी। उन्होंने चैन की सांस लेते हुए कहा था—'कोई हर्ज नहीं, चार अंगुलियां ही काफी हैं।'

घातक किरणों ने उनके सारे शरीर को छेद डाला। उन्हें आपना बायां हाथ और दाहिने हाथ का अग्रभाग कटवा देना पड़ा। उनकी यह दशा देखकर उनके मित्रों ने रेडियम से दूर रहने की उन्हें राय दी, तब उन्होंने शांत स्वर में कहा-'हमें अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए। ये प्रयोग किए बिना मेरे लिए दूसरा कोई विकल्प नहीं है।'

और मानवता की सेवा में उन्होंने अपनी काया की हवि दे दी।

दृढ़ प्रतिज्ञ

मेधावी विद्यार्थी रघुनाथ पुरुषोत्तम परांजपे ने फर्ग्यूसन कॉलेज में गणित में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया था, अतः सरकार ने उन्हें छात्रवृत्ति देकर विशेष अध्ययन के लिए कैम्ब्रिज भेजा। विदेश जाते समय गोपालकृष्ण गोखले ने उनसे वचन ले लिया कि वे विदेश से वापस आने पर फर्ग्यूसन कॉलेज की आजीवन सेवा करेंगे।

परांजपे कुछ वर्ष बाद सीनियर रैंगलर बनकर वापस लौटे। उनकी प्रतिभा एवं योग्यता के आगे बड़ी-बड़ी नौकरियां नतमस्तक थीं। फर्ग्यूसन कॉलेज ने भी होनहार युवक की वचनबद्धता तोड़नी चाही लेकिन

परांजपे दृढ़ प्रतिज्ञ थे। एक बार वचन दे चुके सो दे चुके। उन्होंने कहा—'मैं अपने गुरु तथा अपनी ज्ञानदात्री मातृसंस्था को जो वचन दे चुका हूं, उससे कदापि विमुख नहीं हूंगा।'

और वे सचमुच केवल पचहत्तर रुपये मासिक वेतन पर बीस वर्षों तक फर्ग्यूसन कॉलेज की सेवा करते रहे।

मां की याद में

'टाइम मशीन' तथा 'शेप ऑफ थिंग्स टु कम' जैसे वैज्ञानिक उपन्यासों के जनक एच. जी. वेल्स लंदन स्थित अपना मकान किसी को दिखा रहे थे। तीसरी मंजिल पर एक छोटे से कमरे को दिखाते हुए उन्होंने कहा-'यह मेरा शयन-कक्ष है।'

'परन्तु आप निचली मंजिल में अपने शानदार कमरों में क्यों नहीं रहते?' मित्र ने पूछा।

'वे कमरे मेरी नौकरानी और रसोइए के लिए हैं। दोनों पिछले बीस वर्षों से मेरे साथ रहते हैं।' वेल्स ने कहा।

मित्र ने तर्क किया-'मगर अन्य स्थानों पर तो छोटे कमरे नौकरों के लिए रखे जाते हैं।'

'इसीलिए मेरे मकान में वैसी व्यवस्था नहीं है। मेरी मां किसी समय लंदन में एक मकान में नौकरानी थी।' वेल्स ने स्पष्ट किया।

परीक्षा की घड़ी

बात इंग्लैंड की है। आचार्य जगदीशचंद्र बसु को इस प्रयोग का प्रदर्शन करना था कि पौधे भी हमारी तरह पीड़ा का अनुभव करते हैं। उनका प्रयोग देखने ढेर सारे वैज्ञानिक एवं जिज्ञासु नर-नारी आए। बसु

सूट या मुझे?

प्रसिद्ध नीग्रो वैज्ञानिक वाशिंगटन कार्वर को अमेरिकी कांग्रेस ने एक बार विशेषज्ञों की सभा में आमंत्रित किया। जब कार्वर प्रस्थान करने लगे तो किसी मित्र ने सलाह दी-'आप राजधानी जा रहे हैं, कम से कम नया सूट तो बनवा लेते।'

कार्वर ने उत्तर दिया-'यदि वे लोग नया सूट चाहते हैं तो ट्रंक में एक बढ़िया-सा सूट रखकर भेज दो और यदि मुझे चाहते हैं तो जैसा मैं हूं, वैसा ही उनको स्वीकार करना पड़ेगा।'

मानवता की सेवा में

त्यूरिन विश्वविद्यालय (इटली) के रेडियोलॉजी-विशेषज्ञ मारियो पोंजियो ने कैंसर के इलाज की खोज में अपनी आहुति दे दी। अपने शरीर पर वह एक्स--किरणों के प्रभाव का अध्ययन करते। घातक किरणों की मार से पहले उन्हें बाएं हाथ की एक अंगुली कटानी पड़ी। उन्होंने चैन की सांस लेते हुए कहा था—'कोई हर्ज नहीं, चार अंगुलियां ही काफी हैं।'

घातक किरणों ने उनके सारे शरीर को छेद डाला। उन्हें आपना बायां हाथ और दाहिने हाथ का अग्रभाग कटवा देना पड़ा। उनकी यह दशा देखकर उनके मित्रों ने रेडियम से दूर रहने की उन्हें राय दी, तब उन्होंने शांत स्वर में कहा-'हमें अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए। ये प्रयोग किए बिना मेरे लिए दूसरा कोई विकल्प नहीं है।'

और मानवता की सेवा में उन्होंने अपनी काया की हवि दे दी।

दृढ़ प्रतिज्ञ

मेधावी विद्यार्थी रघुनाथ पुरुषोत्तम परांजपे ने फर्ग्यूसन कॉलेज में गणित में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया था, अतः सरकार ने उन्हें छात्रवृत्ति देकर विशेष अध्ययन के लिए कैम्ब्रिज भेजा। विदेश जाते समय गोपालकृष्ण गोखले ने उनसे वचन ले लिया कि वे विदेश से वापस आने पर फर्ग्यूसन कॉलेज की आजीवन सेवा करेंगे।

परांजपे कुछ वर्ष बाद सीनियर रैंगलर बनकर वापस लौटे। उनकी प्रतिभा एवं योग्यता के आगे बड़ी-बड़ी नौकरियां नतमस्तक थीं। फर्ग्यूसन कॉलेज ने भी होनहार युवक की वचनबद्धता तोड़नी चाही लेकिन

परांजपे दृढ़ प्रतिज्ञ थे। एक बार वचन दे चुके सो दे चुके। उन्होंने कहा—'मैं अपने गुरु तथा अपनी ज्ञानदात्री मातृसंस्था को जो वचन दे चुका हूं, उससे कदापि विमुख नहीं हूंगा।'

और वे सचमुच केवल पचहत्तर रुपये मासिक वेतन पर बीस वर्षों तक फर्ग्यूसन कॉलेज की सेवा करते रहे।

मां की याद में

'टाइम मशीन' तथा 'शेप ऑफ थिंग्स टु कम' जैसे वैज्ञानिक उपन्यासों के जनक एच. जी. वेल्स लंदन स्थित अपना मकान किसी को दिखा रहे थे। तीसरी मंजिल पर एक छोटे से कमरे को दिखाते हुए उन्होंने कहा–'यह मेरा शयन-कक्ष है।'

'परन्तु आप निचली मंजिल में अपने शानदार कमरों में क्यों नहीं रहते?' मित्र ने पूछा।

'वे कमरे मेरी नौकरानी और रसोइए के लिए हैं। दोनों पिछले बीस वर्षों से मेरे साथ रहते हैं।' वेल्स ने कहा।

मित्र ने तर्क किया–'मगर अन्य स्थानों पर तो छोटे कमरे नौकरों के लिए रखे जाते हैं।'

'इसीलिए मेरे मकान में वैसी व्यवस्था नहीं है। मेरी मां किसी समय लंदन में एक मकान में नौकरानी थी।' वेल्स ने स्पष्ट किया।

परीक्षा की घड़ी

बात इंग्लैंड की है। आचार्य जगदीशचंद्र बसु को इस प्रयोग का प्रदर्शन करना था कि पौधे भी हमारी तरह पीड़ा का अनुभव करते हैं। उनका प्रयोग देखने ढेर सारे वैज्ञानिक एवं जिज्ञासु नर-नारी आए। बसु

ने एक इंजेक्शन के द्वारा एक पौधे को ज़हर दिया। सिद्धांततः पौधे को क्षणभर में मुरझा जाना था, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। उपस्थित जन-समुदाय हंसने लगा। बसु के लिए यह बड़ी कठिन घड़ी थी।

'पौधे को विष देने से कोई हानि नहीं हुई, इसका मतलब है कि विष मुझे भी नहीं मार सकता।' ऐसा कहकर उन्होंने ज़हर की शीशी उठाकर पी ली। विस्मय से लोग चिल्ला उठे और हाय-तोबा मच गई।

इसी बीच एक व्यक्ति खड़ा हुआ और सबको शांत करके उसने भरी सभा में स्वीकार किया कि उसने ज़हर के बदले उसी रंग का पानी शीशी में भर दिया था।

फिर क्या था, बसु ने वास्तविक विष लेकर पुनः पौधे को इंजेक्शन दिया। देखते ही देखते पौधा मुरझा गया। उपस्थित समुदाय खुशी से झूम उठा और आचार्य बसु ने आंखें उठाकर भीड़ पर नजर डाली, मानो उन्हें अपनी खोज का पुरस्कार मिल चुका था।

एक-एक मिनट का हिसाब

भारत के प्रतिभाशाली इंजीनियर भारतरत्न डॉ. मोक्षगुंडम् विश्वेश्वरैया वक्त के बड़े पाबंद थे। वे एक-एक मिनट का हिसाब रखते। एक दिन एक व्यक्ति उनसे मिलने आया। वह उनकी इस आदत को जानता था। अतः जल्दी में वह समय से एक मिनट पहले उनके घर पहुंच गया। डॉक्टर विश्वेश्वरैया किसी काम में लगे हुए थे। अपना काम छोड़कर वे उससे मिलने आए। घड़ी देखी और बोले-'आपने एक मिनट पहले आकर मेरा एक अमूल्य मिनट नष्ट कर दिया। इस मिनट में मैं कोई और काम कर सकता था।'

गुड़िया की मरम्मत

एक बार मारकोनी आयरलैंड गए। उनके आने की खबर सुनकर अखबारों के प्रतिनिधि उनसे मिलने पहुंचे लेकिन मिल नहीं सके क्योंकि फुरसत ही नहीं थी। बाद में पता चला कि एक छोटी-सी बच्ची अपनी टूटी हुई गुड़िया लेकर उनके पास आयी थी जिसकी मरम्मत करने में मारकोनी देर तक व्यस्त रहे।

नियम के पक्के

जिस तरह डॉ. विश्वेश्वरैया वक्त के पाबंद थे, उसी तरह नियम के भी बड़े पक्के थे। बात तब की है, जब वह 'भारत-रत्न' की उपाधि लेने दिल्ली आये थे। सरकारी मेहमान के नाते वह राष्ट्रपति भवन में ठहराए गए थे।

एक दिन सुबह तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद से वह बोले-'अब मुझे इजाजत दीजिए।'

राजेन्द्र बाबू ने कुछ दिन और ठहरने का आग्रह किया। लेकिन उन्होंने कहा-'चूंकि राष्ट्रपति-भवन का नियम है कि कोई व्यक्ति यहां तीन दिन से अधिक नहीं ठहर सकता, इसलिए अब मैं न रुक सकूंगा।'

राजेन्द्र बाबू ने जोर दिया-'यह नियम पुराना हैं। इस पर ध्यान न दीजिए और यह आपके लिए नहीं लागू होता।'

लेकिन डॉक्टर विश्वेश्वरैया ने राजेन्द्र बाबू की एक बात नहीं मानी और उनसे विदा लेकर कहीं और ठहरने चले गए।

भगवान से बात

एक दिन एक छोटा बच्चा बेतार के आविष्कारक मारकोनी के दफ्तर में आया और कर्मचारियों से बोला कि मैं मालिक से मिलना चाहता हूं। खबर पाते ही मारकोनी ने उसे बुला लिया। आने का कारण पूछने पर बच्चा बोला-'क्या आप भगवान से बात कर सकेंगे? मेरा कुत्ता बहुत बीमार है। पिताजी कहते हैं कि हमें उसे वापस स्वर्ग भेज देना होगा। मैं उसे अभी अपने पास रखना चाहता हूं। क्या मेरी बात आप ईश्वर तक पहुंचा सकेंगे?'

भला वे बच्चे को कैसे समझाते कि बेतार के जरिए कैसे भगवान से बात हो सकती है? लेकिन उन्होंने उस बच्चे के कुत्ते की जान बचाने की भरसक कोशिश की। लंदन के सबसे मशहूर चिकित्सक को बुलाकर कुत्ते की दवा करवायी। यह सौभाग्य ही था कि कुत्ता बच गया।

फिर वहीं

बिजली के बल्ब के आविष्कारक एडिसन काम की धुन में इस कदर खोये रहते कि कई दिन तक अपनी प्रयोगशाला से बाहर न निकलते। भोजन भी वहीं मंगा लेते। इस बात से उनकी पत्नी को चिढ़ थी।

एक दिन जब, काफी दिनों बाद, वह अपनी प्रयोगशाला से बाहर निकले, तो उनकी पत्नी ने सलाह दी-'तुम दिन-रात काम में लगे रहते हो, कभी दो-चार दिन की छुट्टी ले लिया करो।'

'लेकिन मैं छुट्टी लेकर जाऊंगा कहां?'

‘जहां तुम्हारा मन चाहे।’

‘तो फिर वहीं जाता हूं।’ कहकर एडिसन अपनी प्रयोगशाला में फिर घुस गए।

मजेदार परंपरा

एक बार किसी तरुणी ने ब्रिटिश दार्शनिक एवं गणितज्ञ बर्ट्रेंड रसेल को पत्र लिखा–‘क्या नास्तिक होते हुए भी आप क्रिस्मस का त्योहार मनाते हैं?’

रसेल ने उत्तर दिया–‘मैं क्रिस्मस को कोई धार्मिक महत्त्व नहीं देता, बल्कि एक मजेदार परम्परा मानता हूं और धार्मिक महत्त्व न देते हुए भी उसे मनाने में कोई आपत्ति नहीं समझता।’

लाभ की बात

जिस समय, 1831 में, फैराडे ने यह सिद्ध कर दिया कि विद्युत् धारा बिना बैटरी के (विद्युत् चुम्बकीय प्रेरण से) भी उत्पन्न की जा सकती है और अपने प्रयोग का प्रदर्शन किया तो एक पुत्रवती महिला ने पूछा–‘इस प्रयोग से लाभ क्या है?’

फैराडे ने तुरन्त उत्तर दिया–‘नवजात शिशु से लाभ क्या है?’

कल का सच

तत्कालीन प्रधानमंत्री ग्लैडस्टन ने भी ऐसी आशंका प्रकट की थी। फैराडे ने बड़ी गंभीरता से उत्तर दिया–‘कुछ दिन ठहरिए, आप इस पर भी टैक्स लगा सकेंगे।’

आगे यह भविष्यवाणी अक्षरशः सच साबित हुई।

‘सर माइकेल’ नहीं

महारानी विक्टोरिया ने फैराडे के अनुसंधानों पर मुग्ध होकर उन्हें ‘सर’ की उपाधि दी। पर फैराडे ने उसे यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि मैं ‘माइकेल फैराडे’ ही रहकर मरना चाहता हूं, ‘सर माइकेल’ होकर नहीं।

अभिशाप नहीं, वरदान

एडिसन बचपन में ही बहरे हो गए थे लेकिन इस कमी का उन्हें कभी अहसास नहीं हुआ। उल्टे इसे उन्होंने वरदान ही माना। जीवन भर वह अनुसंधान करते रहे। बिजली का बल्ब, ग्रामोफोन, वोट रिकार्डर, चलचित्र कैमरा जैसे 2,500 आविष्कारों से उन्होंने मानव को सुख-समृद्धि प्रदान की।

पोर्ट हरन से डेट्रायट तक रेलगाड़ी के डिब्बे में सब्जी बेचने, अखबार निकालने से लेकर टेलीग्राफ ऑपरेटर के रूप में अपनी जीवन-यात्रा शुरू करने वाले एडिसन दुनिया भर में अपने आविष्कारों के लिए चर्चित हुए। उनका कहना था कि - बहरेपन ने मुझे गपशप के आनंद से वंचित कर दिया पर इसकी मुझे खुशी ही है। रात को जिस होटल में मैं खाना खाने जाता, वहां जब दूसरे लोग गपशप में लगे होते, मैं अपनी समस्याओं पर सोचता रहता। अगर मैंने भी वे सब बेमानी बातें और आवाजें सुनी होतीं जो सामान्य आदमियों को सुननी पड़ती हैं, तो शायद आज मुझमें इतना मनोबल न होता।

और एडिसन ने अभिशाप को भी वरदान में परिवर्तित कर दिखाया।

एक सीमा तक

एक बार पांडिचेरी के अरविंद आश्रम के संगीतज्ञ श्री दिलीपकुमार राय ने बर्ट्रेंड रसेल से भेंट की। राय ने उन्हें अपना परिचय देते हुए अपनी कई पीढ़ियों का गौरव से भरपूर इतिहास सुनाया। यह बात रसेल को अच्छी नहीं लगी तो उन्होंने कहा-'हमें अपने पूर्वजों की प्रशंसा एक सीमा तक करनी चाहिए। यह ठीक भी लगता है। यदि हम प्रशंसा करते चले जायेंगे तो अंत में वहीं पहुंच जायेंगे जहां हमारे पूर्वज बंदर थे।'

सबसे व्यस्त दिन

प्रख्यात रसायनज्ञ आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय से किसी ने पूछा-'आपके जीवन में सबसे व्यस्त दिन कौन-से रहे हैं?'

आचार्य राय ने उत्तर दिया-'आलसी तथा अव्यवस्थित लोगों को आवश्यक कामों के लिए तो क्या, रोज़मर्रा के कामों के लिए भी समय नहीं मिलता किन्तु व्यस्त व्यक्ति को समय का कभी अभाव नहीं होता। वास्तव में मेरे जीवन के सबसे व्यस्त दिन साठ वर्ष पार कर लेने के बाद के हैं। इस अवधि में
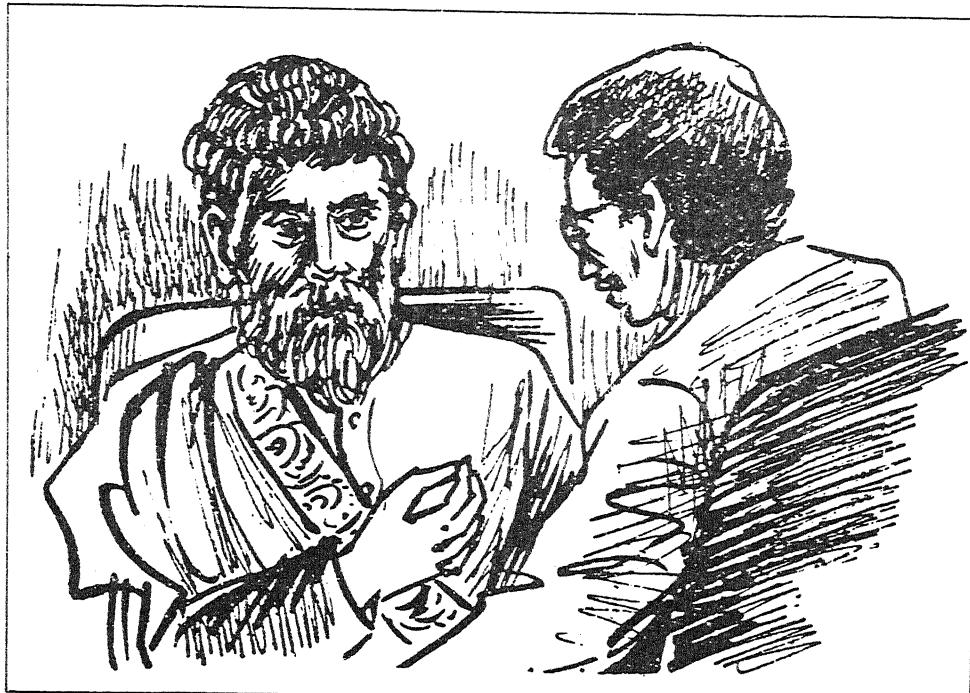
मैंने प्रदर्शनियों के उद्घाटन, राष्ट्रीय संस्थाओं के काम और स्वदेशी प्रचार-प्रसार के सिलसिले में देश के कोई दो लाख मील की यात्रा की है। दो बार यूरोप भी गया हूं। इसके बावजूद मैंने अपने वैज्ञानिक शोधकार्य में कभी बाधा नहीं पड़ने दी। अपनी छुट्टियां काटकर शोधकार्य पूरा करता रहा हूं।'

अन्याय का विरोध

जगदीशचंद्र बसु लंदन के कैंब्रिज विश्वविद्यालय से विज्ञान स्नातक होकर भारत वापस लौटे थे। यहां आते ही कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में भौतिकी के अध्यापक के रूप में उनकी नियुक्ति हुई। उस समय कालेजों में अधिकांश अध्यापक अंग्रेज हुआ करते थे। बंगाल का शिक्षा संचालक भी अंग्रेज था। अत: भेद-भाव की नीति बरती जाती थी। अंग्रेजों की तुलना में भारतीय अध्यापकों को कम वेतन दिया जाता था।

आचार्य बसु ने वेतन लेने से इनकार कर दिया। उन्होंने इस अन्याय का विरोध करते हुए कहा-'मैं वेतन लूंगा तो पूरा, अन्यथा वेतन लूंगा ही नहीं।'

पूरे तीन साल तक उन्होंने वेतन लिया ही नहीं। वेतन न लेने के कारण आर्थिक तंगी हो गई। कलकत्ता का महंगा मकान छोड़कर शहर से दूर एक सस्ता मकान लिया।

नित्य कलकत्ता आने के लिए वह स्वयं नाव खेकर हुगली नदी पार करते। उनकी पत्नी भी साथ होतीं, जो स्वयं नाव खेकर वापस ले जातीं और बसु को लेने दुबारा नाव लातीं। परन्तु इन घोर कष्टों के बीच भी आचार्य बसु ने धैर्य नहीं छोड़ा।

अंत में विरोधियों ने घुटने टेके। उन्हें अंग्रेजों के बराबर वेतन देना स्वीकार किया गया और नये वेतन-क्रम से पूरे तीन साल का वेतन उन्हें एक साथ दिया गया।

न्याय के लिए संघर्ष-पथ पर डटे रहने वाले ऐसे निर्भीक और साहसी थे आचार्य जगदीशचंद्र बसु।

प्रयोगशाला का जीव

आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय अच्छे रसायनज्ञ थे और इससे भी बढ़कर थे सच्चे देश-भक्त। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में उन्होंने बड़ा काम किया। कलकत्ता में गांधी जी की पहली सभा कराने का श्रेय आचार्य राय को ही है।

आचार्य राय ने असहयोग आंदोलन में खूब काम किया। उन्होंने देश के कोने-कोने की यात्राएं कीं और कांग्रेस के अधिवेशनों में भी भाग लिया।

एक बार अपने भाषण में उन्होंने कहा-'मैं रसायनशाला का जीव हूं। मगर ऐसे भी मौके आते हैं जब वक्त का तकाजा होता है कि टेस्ट-ट्यूब छोड़कर देश की पुकार सुनी जाय।'

वास्तव में उनमें 'स्वदेशी भावना' कूट-कूटकर भरी थी। यह संस्कार उन्हें बचपन से ही मिला था।

उद्योगों के जनक

आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय ने 'मरक्यूरस नाइट्राइट' नामक यौगिक बनाया था। हालांकि उसका कोई औद्योगिक महत्त्व न था लेकिन यह एक अस्थायी यौगिक था, अतः इसे बनाना एवं इसके गुणों का अध्ययन कर पाना अपने आप में एक बड़ी बात थी।

आचार्य राय ने महसूस किया कि भारत की प्रगति में उद्योग बड़े सहायक हो सकते हैं। उस समय दवाइयां विदेशों से आती थीं। देशी मुद्रा को बचाना भी आवश्यक था।

उनके पास पर्याप्त कोष तो था नहीं, फिर भी किसी तरह उन्होंने 'बंगाल केमिकल्स एंड फार्मास्युटिकल वर्क्स' की स्थापना की। देखते ही देखते यह औषधि प्रतिष्ठान चल निकला। इसमें दवाइयां भी बनती थीं और रसायन भी तैयार होते थे। आज उक्त प्रतिष्ठान देश का बहुत बड़ा औषधि उत्पादक प्रतिष्ठान बन चुका है। इसके अतिरिक्त अनेक उद्योगों के प्रारंभ करने में उनका योग था।

समय के पाबंद

सर सी. वी. रामन् को कहीं भाषण देना था। भाषण की अध्यक्षता मैसूर राज्य के वरिष्ठतम अधिकारियों में से एक करने वाले थे। सभा छह बचे से होनी थी। रामन् दस मिनट पहले पहुंच गए और मंच पर जाकर बैठ गए। अध्यक्ष महोदय का कहीं अता-पता न था। थोड़ी ही देर में छह का घंटा बजा। व्यवस्थापकों के चेहरे पर हवाइयां उड़ी रही थीं।

रामन् थोड़ी देर बेचैनी से प्रतीक्षा करते रहे और 'अभी तक दर्शन न देने वाले अध्यक्ष महोदय' कहकर सूने सभापति आसन पर नज़र डाली और अपना व्याख्यान प्रारंभ कर दिया। कई मिनट बाद अध्यक्ष महोदय आए। चुपचाप आकर बैठ गए, मानो उन पर घड़ों पानी गिर पड़ा हो।

सर रामन् में समय-निष्ठा अत्यंत प्रबल थी। किसी के आगे वे झुकने वाले पुरुष नहीं थे।

प्रतिष्ठा की बात

बात तभी की है, जब आचार्य राय ने 'बंगाल केमिकल्स' की स्थापना की थी। उस समय लोगों की धारणा थी कि विदेशी दवाओं के सामने देशी दवाएं टिक नहीं पायेंगी। मगर आचार्य राय थे संकल्पी पुरुष। उन्होंने दृढ़ निश्चय किया था कि इस प्रतिष्ठान में बनी कोई भी दवा किसी विदेशी दवा से किसी भी मामले में कम नहीं होगी।

एक बार कई सौ बोतलों का आसव किसी कारणवश बिगड़ गया था। कारखाने के एक कर्मचारी ने कहा-' आसव थोड़ा ही बिगड़ा है, किसी को पता भी नहीं चलेगा। बाजार में आसानी से बिक जायेगा अन्यथा कम्पनी को बड़ा नुकसान उठाना पड़ेगा।'

आचार्य राय उस पर बिगड़े और दृढ़ता से इसका विरोध किया, -' जरा से नुकसान से हमारी प्रतिष्ठा पर आंच आए, यह मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता।'

अंत में बिगड़ी हुई औषध की सारी बोतलों का आसव फेंकवा देने में आचार्य राय को कतई दुःख नहीं हुआ।

असमंजस

नील्स बोर नामक महान वैज्ञानिक डेनमार्क के रहने वाले थे। जब 1943 में नाजी सेना ने वहां कब्जा कर लिया, तब वह अमेरिका आ गये। वहां वह वेश बदलकर एक गुप्त प्रयोगशाला में काम करने जाते थे।

प्रयोगशाला में जाते हुए एक दिन एक महिला ने उन्हें देख कर पहचान लिया। वह पूछने लगी- आप प्रोफेसर बोर हैं न?

प्रोफेसर ने नम्रता से जवाब दिया-' आपको कुछ धोखा हो रहा है। मेरा नाम बेकर है।'

यह कहते-कहते उन्होंने महिला को जब ज्यादा ध्यान से देखा तब वह उन्हें पहचान गये। वह तो उनके परिवार की मित्र निकलीं। उनके मन में उलझन पैदा हुई कि क्या किया जाय। उन्होंने महिला से कहा-' मैं तो बेकर हूं लेकिन आप श्रीमती ब्रून जरूर हैं। आप से मिलकर बड़ा आनंद आया।'

नये सिर से काम

बात सन् 1914 की है। एडिसन की प्रयोगशाला तथा कारखानें में आग लग गयी। न मालूम कितने जरूरी कागजात चलकर राख हो गए। लगभग बीस लाख डालर की कीमत के यंत्र नष्ट हो चुके थे। एडिसन का पुत्र दु:खी मन से एक कोने में खड़ा जलती आग को देख रहा था।

तभी एडिसन बोले-'तुम्हारी मां कहा है? ऐसा दृश्य जीवन में दुबारा देखने को नहीं मिलेगा, उसे भी बुला लाओ।'

दूसरे दिन अपनी आशाओं और स्वप्नों की राख के बीच घूमते हुए सड़सठ वर्षीय बूढ़े आविष्कारक ने कहा-'नुकसान का भी फायदा होता है। हम सब की भूलें जलकर राख हो गईं। ईश्वर का धन्यवाद है कि अब हम नये सिरे से काम कर सकते हैं।'

प्रशंसा के अनेक कारण

सन् 1968 में ट्रीस्ट (इटली) में सैद्धांतिक भौतिकी की अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस के अवसर पर वर्नर हाइजेनवर्ग का वैज्ञानिकों से परिचय कराते हुए पॉल डिराक ने कहा-'हाइजेनवर्ग की प्रशंसा करने के मेरे पास अनेक कारण हैं। वह और मैं एक ही कक्षा के विद्यार्थी थे। हमारी उम्र लगभग बराबर है और हम एक ही समस्या पर शोध कर रहे थे। उसमें हाइजेनवर्ग सफल रहे और मैं असफल। उस समय स्पेक्ट्रोस्कोपी पर बहुत बड़ी मात्रा में जानकारियां इकट्ठी हो गयी थीं और हाइजेनवर्ग ने उन्हें व्यवस्थित करने का समुचित तरीका ज्ञात किया। ऐसा करके उन्होंने सैद्धांतिक भौतिकी के 'स्वर्ण युग' का आरंभ किया। उसके कुछ वर्षों बाद तो दूसरे दर्जे के विद्यार्थी के लिए भी उच्च कोटि का अनुसंधान करना सरल हो गया।'

वास्तव में हाइजेनवर्ग 'क्वांटम यांत्रिकी के जनक' के रूप में विश्वविख्यात हैं। लेकिन डिराक भी कुछ कम नहीं थे। क्वांटम-यांत्रिकी के क्षेत्र में उनके भी अनुसंधान बड़ी अहमियत रखते हैं। यह तो उनकी महानता थी जो उन्होंने बड़ी विनम्रता से हाइजेनवर्ग की प्रशस्ति की।

बहन के लिए

वाष्प इंजन के जनक जार्ज स्टीफेंसन के बचपन की घटना है। एक दिन जार्ज अपनी बहन नेल के साथ न्यूकैसल नगर में घूमने निकला। बाजार में किसी दुकान में रखी एक टोप नेल को भा गयी। मगर टोप की कीमत कुछ अधिक थी। उसकी जेब में टोप की कीमत से पन्द्रह पैसे कम थे। नेल निराश हो गयी। नेल के मन की बात भांप कर जार्ज ने कहा–'तू निराश मत हो, अपनी बहन की खातिर मैं अभी कुछ न कुछ करता हूं।'

थोड़ी देर में जार्ज खुशी-खुशी वापस आया। नेल ने पूछा, 'पैसे मिल गए?' जार्ज ने हामी भरी।

'मगर कहां से?' नेल ने अगला सवाल किया।

'मैंने थोड़ी देर के लिए एक धनी आदमी का घोड़ा थाम रखा था, उसी की मजदूरी के पैसे मिले हैं।' जार्ज ने नेल की जिज्ञासा शांत की।

अनवरत श्रम

एडिसन फोनोग्राम बनाने के काम में व्यस्त थे। इसी बीच एक समस्या खड़ी हुई कि लिपटे हल्के स्वरों से और तेज भारी स्वरों से छुटकारा कैसे पाया जाय। उन्होंने यह गुत्थी सुलझाने का काम अपने एक सहायक के सिपुर्द कर दिया। दो साल तक उस पर काम करने के बाद वह सहायक एडिसन के पास गया और बोला–'मिस्टर एडिसन, मैंने आपके हजारों डालर और अपने जीवन के दो साल इस काम में खपा दिये और निकला कुछ नहीं। अगर कोई हल होता तो मैं अब तक निकाल लेता। मैं इस्तीफा देना चाहता हूं।'

यह सुनकर एडिसन बोले–'जार्ज, मेरा विश्वास है कि हर समस्या, जो ईश्वर ने हमें दी है, उसका हल उसके पास है—हम भले उसे न निकाल सकें। मगर किसी न किसी दिन कोई न कोई उत्तर जरूर निकलेगा। वापस जाओ और कुछ अरसे तक मेहनत और करो।'

क्योंकि मैं एडिसन नहीं हूं

एडिसन बहुत परिश्रमी और अध्यवसायी थे। जिस प्रयोग को वह शुरू करते, उसे यथासंभव अंतिम स्थिति तक ले जाते। बिजली के करेन्ट के बारे में उन्होंने प्रयोग करके एक यंत्र बनाया। उसकी रजिस्ट्री

(पेटेंट) को लेकर अदालत में मामला हो गया। एक अन्य वैज्ञानिक टिन्डल गवाही देने आए।

टिन्डल ने कहा–'मैंने भी मिस्टर एडिसन की प्रक्रिया अपनाई थी और अंतिम स्थिति का मुझे स्पष्ट दर्शन था। लेकिन मैं संकोच कर गया।'

वकील ने पूछा–'जब अंतिम स्थिति आपको इतनी स्पष्ट थी तो आप संकोच क्यों कर गए?'' क्योंकि मैं एडिसन नहीं हूं, जिनकी लगन उन्हें आखिरी हद तक पहुंचाकर ही दम लेती है।' टिन्डल ने जवाब दिया।

महानता के प्रति उदासीन

विश्वविख्यात वैज्ञानिक न्यूटन बहुत बीमार थे। अंत समय निकट था। ऐसे में उनके एक घनिष्ठ मित्र उनसे मिलने आए और बोले– 'यह आपके लिए बहुत संतोष और गर्व की बात है कि प्रकृति के नियमों के रहस्योद्घाटन में आपने बड़ी दिलचस्पी ली और बड़ी उपलब्धियां हासिल कीं।'

यह सुनकर न्यूटन ने बड़ी सहजता से कहा—'मित्र, इसमें अभिमान की तो कोई बात नहीं है। यों संसार मेरे अनुसंधान के बारे में कुछ भी कहे, लेकिन मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं समुद्रतट पर खेलने वाले उस बच्चे के समान हूं, जिसको कभी-कभी अपने साथियों की अपेक्षा कुछ अधिक सुंदर पत्थर, सीप और शंख मिल जाते हैं। वास्तविकता तो यह है कि सत्य का अथाह समुद्र मेरे सामने अब भी बिन खोजा पड़ा है।'

विफल कुछ भी नहीं

एडिसन बैटरियों में लेड (सीसा) का कोई विकल्प ढूंढने में लगे थे। एक दिन एक पत्रकार उनसे मिलने आया। उन्होंने उससे बताया कि वह बीस हजार प्रयोग कर चुके पर उन्हें किसी में भी सफलता नहीं मिली।

आश्चर्यचकित भाव से पत्रकार ने पूछा–'लेकिन इतने प्रयास विफल हो जाने पर भी आपकी हिम्मत पस्त नहीं हुई?'

'विफल!' एडिसन ने कहा–'विफल कुछ भी नहीं हुआ। मैंने उन बीस हज़ार चीज़ों का आविष्कार किया, जो काम नहीं देंगी।'

समय की कीमत

आविष्कारक बेंजामिन फ्रैंकलिन कभी किताबों की दुकान किया करते थे। बात उन्हीं दिनों की है।

एक आदमी ने एक किताब पसंद की और क्लर्क से उसकी कीमत पूछी। क्लर्क ने उत्तर दिया—'एक डालर।'

'इससे कम नहीं?' ग्राहक ने पूछा।

क्लर्क ने साफ मना कर दिया। जब उसने सौदा पटता नहीं देखा तो पूछ बैठा—'क्या फ्रैंकलिन महाशय अंदर हैं? मैं मिलना चाहता हूं।'

थोड़ी देर में फ्रैंकलिन अपना काम छोड़कर बाहर आए। उस आदमी ने पूछा—'मिस्टर फ्रैंकलिन, आप इस किताब की कम से कम क्या कीमत लेना चाहेंगे?'

'सवा डालर।' फ्रैंकलिन का उत्तर था।

'मगर अभी तो आपका आदमी एक डालर मांग रहा था।'

'ठीक है, अपना काम छोड़कर आने में मेरा समय भी तो नष्ट हुआ है।' फ्रैंकलिन ने स्पष्ट किया।

ग्राहक ने बात खत्म करने के इरादे से कहा—'अच्छा अब बताइए, कम से कम क्या कीमत आप लेंगे?'

'डेढ़ डॉलर।'

'डेढ़ डॉलर? अभी तो आप सवा डॉलर कह रहे थे?' खरीददार ने हैरानी जाहिर की।

'जी हां! ध्यान रखिए, ज्यों-ज्यों आप मेरा समय नष्ट करते जायेंगे, किताब की कीमत बढ़ती जायेगी।' फ्रैंकलिन ने बात को साफ किया।

इतना सुनकर उसने चुपचाप पैसे निकाल दिए और किताब लेकर चलता बना।

ज्ञान का रहस्य

एडिसन से एक आदमी ने पूछा-'आपको इतना ज्यादा ज्ञान कैसे हो गया?'

एडिसन ने जवाब दिया-'दूसरे से यह कहकर कि मैं कुछ भी नहीं जानता और यह कि मैं जानना चाहता हूं।'

कविता और संगीत

सुप्रसिद्ध जीवशास्त्री चार्ल्स डार्विन एक स्थल पर लिखते हैं-'अगर मुझे अपना जीवन दुबारा जीना हो तो मैं अपना यह नियम बना लूंगा कि हफ्ते में कम से कम एक बार कुछ कविताएं जरूर पढ़ूंगा और कुछ संगीत जरूर सुनूंगा, क्योंकि मेरे दिमाग का वह हिस्सा जो कुंठित रह गया है, वह इस तरह उपयोग में आने से सक्रिय बना रहेगा।'

'इन रुचियों का अभाव प्रसन्नता का अभाव है। यह अभाव शायद मस्तिष्क के लिए और अधिक संभवत: नैतिक चरित्र के लिए बड़ा हानिकारक हो सकता है क्योंकि यह अभाव हमारे स्वरूप के भावुक अंग को कुंद कर देता है।'

पूजा

रेडियम के आविष्कारक और मैडम क्यूरी के पति पियरे क्यूरी अपनी प्रयोगशाला में एक सूक्ष्मदर्शी के ऊपर झुके हुए काम कर रहे थे। उसी समय उनके कमरे में एक छात्र आया। सूक्ष्मदर्शी पर उसका ध्यान नहीं गया। उसने समझा कि पियरे पूजा कर रहे हैं और वह उल्टे पांव वापस जाने लगा। पदचाप सुनकर पियरे का ध्यान उधर गया तो उन्होंने आवाज देकर छात्र को अपने पास बुलाया।

छात्र ने सफाई देते हुए कहा-'सर, मैंने समझा कि आप पूजा कर रहे हैं। इसी नाते लौटा जा रहा था।'

थोड़ी देर बाद पियरे क्यूरी ने कहा-'मैं पूजा ही कर रहा था। वास्तव में सारा विज्ञान, गवेषणा और अध्ययन प्रार्थना ही है।' इतना कहकर वह फिर अपने काम में लग गए।

पाना और देना

अल्बर्ट आइंस्टाइन ने एक स्थान पर लिखा-'रोज मैं सौ बार अपने को यह याद दिलाता हूं कि मेरी अंदरूनी और बाहरी जिंदगी अनेक लोगों की मेहनत पर निर्भर करती है। उनमें से बहुत से जिंदा हैं, बहुत से जा चुके हैं। और इसीलिए मुझे चाहिए कि भरसक मेहनत करता रहूं और जिस हिसाब से मैंने पाया है और पा रहा हूं, उसी से देता भी रहूं।'

विरोध

सुप्रसिद्ध शिल्पकार जैकब एप्सटाइन का आइंस्टाइन के बारे में एक प्रसंग है।

'जब मैं उनकी अर्द्धप्रतिमा (बस्ट) बना रहा था तो वह रोज मेरे सामने बैठा करते थे। इस बीच वह नाज़ी प्रोफेसरों (आइंस्टाइन यहूदी थे) के किस्से सुनाते और उन पर ताने किया करते थे। इन प्रोफेसरों में से सौ ने उनके सापेक्षवाद के सिद्धांत की आलोचना की थी। आइंस्टाइन ने ठहाका लगाते हुए कहा—'अगर मेरा सिद्धांत गलत होता, तो सौ नहीं, एक ही व्यक्ति का विरोध काफी था।'

धन नहीं, मान नहीं

जब क्यूरी दम्पति को प्रख्यात नोबेल पुरस्कार मिला तो चारों ओर से सम्मानों, अलंकरणों की वर्षा होने लगी। लेकिन वे सदा प्रसिद्धि से दूर रहने की कोशिश करते।

क्यूरी दम्पति धन ही नहीं, मान भी नहीं चाहते थे। वे तो इस सबके बदले में चाहते थे एक सुसज्जित प्रयोगशाला। जब सार्बोन के डीन ने पियरे क्यूरी को बताया कि सरकार उन्हें 'लीअन ऑफ आनर' प्रदान करना चाहती है तो पियरे ने उत्तर दिया—'कृपया मंत्री महोदय से कहने का कष्ट करें कि मुझे इस सम्मान की किंचित् भी आवश्यकता नहीं है। मेरी तो सबसे बड़ी आवश्यकता है एक सुसज्जित प्रयोगशाला।'

विज्ञान कभी नष्ट नहीं होता

रसायन विज्ञान और शिक्षा जगत् में डॉ. रामचरण मेहरोत्रा का बड़ा नाम हो गया है। राजस्थान, दिल्ली और इलाहाबाद विश्वविद्यालयों के वे कुलपति रह चुके हैं और सर्वप्रथम एल्यूमीनियम कार्बाक्सिलेट बनाने का श्रेय उन्हें है।

उनकी पत्नी डॉ. सुमन मेहरोत्रा अपने संस्मरणों में से एक को याद करती हैं:

'चीन के साथ युद्ध के समय मैंने बालकों के लिए विज्ञान की एक कहानी लिखी। बच्चों को विज्ञान व वैज्ञानिक के बारे में बताने का मेरा उद्देश्य था। कहानी के अंत में मैंने लिखा-'झगड़े का अंत यह हुआ कि विज्ञान के आविष्कार से ही विज्ञान का संहार हुआ—प्रयोगशाला जल गई।'

'डॉ. साहब को मैंने कहानी पढ़ने को दी। वह खुश हुए। पर आखिरी पैरा पढ़ते ही उन्होंने मेरी कहानी के पन्ने के दो टुकड़े करके फेंक दिए और गुस्से में बोले-'विज्ञान कभी नष्ट नहीं होता। वैज्ञानिक की प्रयोगशाला कभी जलकर खाक नहीं होती।'

'उन्हें बहुत क्रोध आया। मैंने भी उनसे बहस की, तर्क दिए—पर उन्होंने मेरे सारे तर्कों को काट दिया।'

'हम दोनों की बहस में से एक नयी बात निकली। उनकी वैज्ञानिक भावना मेरी समझ में आ गई। फिर मैंने अपनी कहानी का अंत मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया।'

बंगाली केमिस्ट

एक बार सुप्रसिद्ध रसायनज्ञ आचार्य प्रफुल्लचंद राय ने अपने आपको किसी लेख में एक 'बंगाली लेखक' की संज्ञा दी। यह बात डॉ. सत्यप्रकाश (इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रसायन के आचार्य और विख्यात विज्ञान लेखक) को अच्छी नहीं लगी। फिर उन्होंने अपनी आत्मकथा लिखी तो उसका शीर्षक रखा-'लाइफ एंड एक्सपीरियंस ऑफ ए बंगाली केमिस्ट' (एक बंगाली रसायनज्ञ का जीवन और अनुभव)। अब तो डॉ. सत्यप्रकाश के धैर्य की सीमा नहीं रही। उन्होंने आचार्य राय को पत्र लिखा- 'हम तो अभी तक आपको 'भारतीय रसायनज्ञ' समझते थे, पर अब मालूम हुआ कि आप मात्र 'बंगाली रसायनज्ञ' हैं।'

इस खरी बात के लिए उन्हें आचार्य राय का कोपभाजन भी बनना पड़ा, पर उन्हें इसका तनिक भी दु:ख नहीं हुआ।

सिद्धांत की बात

डॉ. सत्यप्रकाश के ही बारे में उनके छोटे भाई श्रीप्रकाश जी का एक संस्मरण इस प्रकार है:

'एक दिन डॉ. रामकुमार वर्मा (हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार) मेरे घर आए। उनका सत्कार किया गया। मिठाई आयी, घर में पकौड़ी तली गई, चाय भी बनवायी गई। पर वर्मा जी को तलब थी सिगरेट की। वे सिगरेटकेस घर पर ही भूल आए थे।

'सत्यप्रकाश, सिगरेट मंगवा दो।' उनका आदेश। पर भाई साहब (डॉ. सत्यप्रकाश) ने कहा कि सिगरेट के पैसे उन्हें ही देने होंगे। उनका तो जीवन-दर्शन था-'जिसका सेवन मैं स्वयं नहीं करता, वह दूसरों को कैसे उपलब्ध करा दूं?'

पहले तो वर्मा जी परेशान। जो व्यक्ति दो रुपये की मिठाई मंगवा सकता है, वह सिगरेट के लिए दो पैसे मांगे। पर जब उन्हें आभास हो गया कि यह प्रश्न पैसे का नहीं, सिद्धांत का है तो उन्होंने खुशी-खुशी सिगरेट के लिए नौकर को पैसे दे दिए।

चरित्र-निर्माण

राजेन्द्र जिज्ञासु अपने संस्मरणों में लिखते हैं:

'जून 1975 की बात है। डॉ. सत्यप्रकाश, सत्यकाम विद्यालंकार (प्रसिद्ध हिन्दी लेखक) और मैं—तीनों बैठे थे। सत्यकाम जी की पुस्तक 'चरित्र-निर्माण' की चर्चा चल पड़ी। मैंने ही चलाई। मैंने कहा-'मैंने यह पुस्तक विद्यार्थी जीवन में पढ़ी थी।' सत्यप्रकाश जी ने कहा-'सत्यकाम जी, मैं ही एक अभागा व्यक्ति हूं, जो आपकी इस लोकप्रिय पुस्तक को न पढ़ पाया। अब पढ़ूं भी तो क्या लाभ? मेरे चरित्र निर्माण की बेला तो निकल गई। हां, चरित्र-भ्रष्ट तो अब भी हो सकता हूं। फिसलने का क्या है, मनुष्य कभी भी गिर सकता है।'

जन्म से किसान, कर्म से अछूत

केन्द्रीय चर्म अनुसंधान संस्थान, मद्रास (अब चेन्नई) के निदेशक के रूप में डॉ. वाई. नायुडम्मा ने देश के चमड़ा उद्योग को खूब आगे बढ़ाया। फिर वे वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के महानिदेशक बने। उन्होंने देश के चमड़ा उद्योग की समस्याओं को एक-एक करके

निपटाया और वैज्ञानिक अनुसंधानों का लाभ देश के लाखों अपढ़ लोगों तक पहुंचाया। उन्हीं की तपस्या का यह परिणाम है कि आज चर्म उत्पादन एवं निर्यात में देश बड़ी तरक्की कर चुका है। डॉ. नायुडम्मा बड़े फख्र से कहा करते थे-'मैं जन्म से किसान हूं और कर्म से अछूत।'

प्रसिद्धि से दूर

सन् 1903 में सारे संसार की आंखें मैडम क्यूरी की ओर उठ गईं। पहली बार किसी महिला को नोबेल पुरस्कार जो मिला था। अपने पति पियरे क्यूरी और हेनरी बेकरल के साथ उन्हें भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया था। दुनिया भर के अखबारों में क्यूरी की चर्चा हुई। कुछेक पत्रिकाओं ने उनके सम्मान में विशेषांक निकाले। व्यापारियों ने अपने उत्पादों का नाम उनके नाम पर रख दिया। घोड़ों के एक व्यापारी ने अपने प्रिय घोड़े का ही नाम 'क्यूरी' रख दिया।

पर क्या इस चकाचौंध से वह प्रभावित हुईं? क्या वह इन सबके बीच खुश थीं? नहीं, कदापि नहीं। वह तो भीड़-भाड़ और शोर-शराबे से दूर, एकांत का जीवन बिताना चाहती थीं। एक दिन जब वह भाषण देने बर्लिन पहुंचीं तो उन्हें यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि स्टेशन पर उपस्थित जनता का ध्यान उन पर नहीं था।

अत्यंत संभ्रांत महिलाओं में इस 'सबसे साधारण महिला' के बारे में महाविज्ञानी अल्बर्ट आइंस्टाइन ने एक बार कहा था-'सब विद्वानों में मदाम क्यूरी ही ऐसी हैं जिन्हें प्रसिद्धि अपने ध्येय से विचलित न कर सकी।'

काम की सुध

सोर्बोन (पेरिस) में पढ़ाई करने के लिए मान्या कसीमीर दम्पति (अपनी बहन और बहनोई) के पास आ गई। पर बड़ी बहन पर वह भार न बन सके, इस नाते उसने पेरिस के एक पिछड़े मुहल्ले में 15 फ्रैंक मासिक पर किराये की एक कोठरी ले ली और वहीं रहने लगी।

एक दिन उसका बहनोई भागा-भागा आया और आते ही उसने पूछा-'मान्या, सच-सच बताना, आज तुमने कुछ खाया है।'

ऐसे प्रश्न को सुनकर वह घबरा उठी पर सहज बनने की कोशिश करती हुई बोली-'हां-हां' बहुत कुछ खाया है।'

लेकिन उसकी झूठ पकड़ ली गई थी। वास्तव में मान्या ने पिछले चौबीस घंटों में कुछ भी नहीं खाया था। उसकी एक सहेली ने कसीमिर दम्पति को बताया था कि मान्या आज स्कूल में बेहोश होकर गिर पड़ी थी। यही सुनकर उसका बहनोई उसकी खोज-खबर लेने चला आया था।

कसीमिर उसे अपने घर ले गया। दीदी ब्रोन्या ने उसे खिलाया-पिलाया, लेकिन उसका मन वहां लगा नहीं। अत: वह फिर चली आयी, अपनी उसी अंधेरी सीलन भरी कोठरी में। उसे अपनी पढ़ाई की सुध थी, खाने-पीने की नहीं। केवल काम की धुन में वह दिवानी रहती। इसी मान्या ने अपने को कष्ट में रखकर, जी-तोड़ मेहनत करके, आगे चलकर अपने पति पियरे क्यूरी के साथ रेडियम की खोज की। अब तक मान्या मैडम क्यूरी के नाम से सारी दुनिया में विख्यात हो चुकी थी।

धरोहर

23 जून, 1985 को एयर इंडिया के जम्बोजेट 'कनिष्क' की दुर्घटना में हमने डॉ. नायुडम्मा को खो दिया। नि:संदेह डॉ. नायुडम्मा की क्षति से भारतीय विज्ञान में एक बड़ी भारी रिक्तता उत्पन्न हो गयी है, जिसकी भरपाई संभव नहीं।

अपने पिता को स्मरण करते हुए उनके बड़े बेटे रितीश ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा-'मेरे पिता की सबसे मनपसंद उक्ति थी कि मैं तुम लोगों के लिए रुपया-पैसा तो कुछ नहीं छोड़ जाऊंगा, बस मेरे दोस्त और तुम्हारी शिक्षा ही तुम्हारी सम्पत्ति होगी।'

भावुक होते हुए उनकी तीनों संतानों ने कहा कि अपने पिता की इस विशाल धरोहर का महत्त्व अब उनकी समझ में आ रहा है।

अनुसंधान ठप नहीं होता

पियरे क्यूरी को सोर्बोन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर नियुक्त किया गया। मदाम क्यूरी अपने अनुसंधान-कार्य में लगी ही थीं कि इसी बीच एक दुर्घटना हो गई। 19 अप्रैल, 1906 को एक मीटिंग से लौटते समय पियरे एक घोड़ागाड़ी के नीचे आ गए और उनकी मृत्यु हो गई।

पर क्या मदाम ने अपना कार्य ठप कर दिया? नहीं, कदापि नहीं। उन्हें अपने पति की बात याद आयी-'वैज्ञानिक को अधिकार नहीं कि वह अपना काम छोड़ दे।' फिर मदाम अपने काम में जुट गईं। पति के स्थान पर विश्वविद्यालय ने उन्हें प्रोफेसर बनाया। हालांकि विश्वविद्यालय के कुछ लोगों ने इसका विरोध किया पर फ्रांसवासियों ने सारी परम्पराएं तोड़ दीं। वस्तुत: वे इस सम्मान के योग्य थीं ही।

कहने के लिए कुछ नहीं

कोलंबिया के सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. फ्रैंक आयटे लॉटे ने एक बार आइंस्टाइन के सम्मान में एक प्रीति-सम्मेलन आयोजित किया। उपस्थित मेहमानों के सम्मुख कुछ बोलने के लिए जब आइंस्टाइन से आग्रह किया गया तो वह उठ खड़े हुए और 'सज्जनो! मुझे खेद है कि मेरे पास आप लोगों से कहने के लिए अभी कुछ भी नहीं है' कहकर अपनी जगह पर बैठ गए।

मेहमानों पर प्रतिक्रिया अच्छी नहीं हुई। आइंस्टाइन ने असंतोष भांप लिया और पुन: मंच पर पहुंचे-'मुझे क्षमा कीजिएगा, जब भी मेरे पास कहने के लिए कुछ होगा, मैं स्वयं आप लोगों के सम्मुख उपस्थित हो जाऊंगा।'

छह वर्ष बाद डॉ. आयटे लॉटे को आइंस्टाइन का तार मिला-'बंधु, अब मेरे पास कहने को कुछ है।'

शीघ्र ही प्रीति-सम्मेलन का आयोजन हुआ। इस बार आइंस्टाइन अपने 'क्वांटम-सिद्धांत' की व्याख्या करने लगे, जो किसी के पल्ले नहीं पड़ा।

प्रोत्साहन

भाप के इंजन से सफलतापूर्वक नावों के संचालन का श्रेय अमेरिकी आविष्कारक रॉबर्ट फुल्टन को है। पहली सफल स्टीम बोट उसी ने बनायी। वह न्यूयार्क से अलबेनी तीन दिन में पहुंची। जब वह वापसी की तैयारी कर रहे थे, तब एक आदमी ने उससे पूछा-'मुझे न्यूयार्क जाना है। क्या मुझे अपने साथ ले चलोगे?'' जरूर ले चल सकते हैं, बतौर किराया छह डालर लगेंगे।' उसने फौरन किराये की राशि चुकायी और उनकी बोट पर सवार हो गया।

उस आदमी के लिए तो यह एक साधारण-सी बात थी। वह इसे भूल भी गया। पर रॉबर्ट फुल्टन न भूल सका। चार साल बाद फुल्टन ने उसे अपने घर खाने पर आमंत्रित किया। भोजन के बीच में फुल्टन ने कहा-'आप से हुई पहली मुलाकात मुझे बार-बार याद आती है। जब आपने मुझे किराया दिया था, तब मेरे मन में तरह-तरह की भावनाएं उठीं जो अभी तक ताजा बनी हुई हैं। आपका वह किराया देना मेरा भाग्य बदल देने वाला साबित हुआ। अंधकार के बीच वह ज्योति बनकर आया, जिसने मुझे अपने मानव बंधुओं के लिए अपनी उपयोगिता का विश्वास दिलाया। ईश्वर आपको सदा सुखी रखे। आपके इस काम से मुझे बहुत प्रोत्साहन मिला और मुझमें बड़ी हिम्मत आ गयी।'

प्रवेश-शुल्क किसी कीमत पर नहीं

1911 में मैमन सिंह (बंगाल) में होने वाली 'बंगीय साहित्य सम्मेलन' की एक बैठक में स्वागत समिति के अध्यक्ष महाराजा कुमुदचंद्र सिंह ने आचार्य जगदीश बसु को लिखा कि बहुत अधिक संख्या में लोग उत्सुक हैं कि आप अपने आविष्कारों के बारे में उन्हें समझाएं और उनका प्रयोगात्मक प्रदर्शन कर दिखाएं। साथ ही महाराजा ने यह प्रस्ताव भी सुझाया कि इसके लिए प्रवेश-शुल्क रख दिया जाय और अगर एक सौ रुपये का भी शुल्क रखा जाय तब भी सभामंडल पूरी तरह भर जायेगा।

जगदीश बसु इस प्रस्ताव से उत्तेजित हो उठे और अस्वीकार करते हुए महाराजा को लिखा-'मैं सिर्फ अमीरों के लिए अपना व्याख्यान नहीं दूंगा। मैं दो बार व्याख्यान देने को राजी हूं, पर प्रवेश-शुल्क लगाए जाने पर किसी भी तरह नहीं।'

अंत में महाराजा ने उनसे माफी मांगी और बसु ने दो दिन व्याख्यान दिए-एक दिन अंग्रेज़ी में और एक दिन बंगला में। बंगला के व्याख्यान में उन्होंने केवल सरल शब्दों का व्यवहार किया और बिना एक भी पारिभाषिक शब्द का प्रयोग किए उन जटिल वैज्ञानिक तथ्यों को बिलकुल भी विज्ञान न जानने वालों के समक्ष प्रस्तुत किया और श्रोताओं ने उनका भाव भी बड़ी सहजता से ग्रहण कर लिया।

छात्रों के प्रति उदार

एक बार जब वाइसराय लार्ड हार्डिंग कलकत्ता आने वाले थे तब उनके कार्यक्रमों में, प्रेसीडेंसी कॉलेज में जगदीश बसु का, एक प्रयोगात्मक प्रदर्शन भी सुनिश्चित किया गया। किन्तु तभी दिल्ली में वाइसराय को लक्ष्य करके एक बम फेंका जा चुका था, जिसमें उन्हें हल्की चोट भी आ गयी थी। परिणाम यह हुआ कि प्रयोगात्मक प्रदर्शन का स्थल बदलकर 'गवर्नमेंट हाउस' (राजभवन) कर दिया गया। किन्तु जब उन्हें यह पता लगा कि छात्रों की फाटक पर तलाशी ली जायेगी तो आचार्य बसु ने प्रदर्शन करने से ही इनकार कर दिया। विवश होकर अधिकारियों को ही झुकना पड़ा। छात्रों की कोई तलाशी नहीं ली गयी। फिर बसु ने अपना व्याख्यान दिया। आचार्य बसु किसी के आगे झुकने वाले पुरुष नहीं थे।

विश्वविद्यालय की शोभा

सर तारकानाथ पालित, डॉ. रासबिहारी घोष तथा सर आशुतोष मुकर्जी के प्रयासों से कलकत्ता में एक साइंस कॉलेज खोला गया। कॉलेज के भौतिकी विभाग के लिए एक योग्य अध्यापक की आवश्यकता थी। सर आशुतोष का ध्यान रामन् की ओर गया लेकिन बात करने का साहस नहीं जुटा सके, क्योंकि उनका विचार था कि रामन एकाउंटेंट जनरल की बड़ी नौकरी छोड़कर कम वेतन पर अध्यापक की नौकरी करना पसंद नहीं करेंगे।

लेकिन रामन् को जब इस बात की खबर मिली तो उन्होंने सरकारी नौकरी से फौरन इस्तीफा दे दिया और 1917 में रामन् कलकत्ता विश्वविद्यालय में भौतिकी के अध्यापक नियुक्त हुए।

अध्यापक के रूप में काम करते समय वे शोध एवं अध्ययन-अध्यापन में हमेशा लगे रहे। उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैली और भारत के कोने-कोने से विद्यार्थी उनकी ओर खिंचकर आने लगे। उनका शिष्य बनने की होड़ विद्यार्थियों में लगी रहती। एक बार प्रिंसिपल आर्चीबाल्ड ने उनके बारे में कहा

था—'किसी विश्वविद्यालय की शोभा उसकी बड़ी-बड़ी आलीशान इमारतें नहीं, वरन् वहां पढ़ाने-पढ़ने वाले गुरु और शिष्य होते हैं।'

देश का गौरव

जगदीश बसु कट्टर देशभक्त थे। उनके व्याख्यानों और लेखों में प्रायः देशभक्ति की भावना प्रकट होती रहती थी।

एक बार तो उन्होंने रवीन्द्रनाथ टैगोर को लिखे गए पत्र के अंत में लिखा-'यदि मुझे एक सौ बार भी फिर जन्म लेना पड़ा, तब भी मैं हर बार हिन्दुस्तान को ही अपनी मातृभूमि बनाना पसंद करूंगा।'

बात सन् 1903 की है। उन्होंने एम. ए. की अपनी कक्षा के सभी छात्रों को अपने घर निमंत्रित किया। अपने ग्रामोफोन पर एक लोकगीत बजते वक्त वह बेहद उत्तेजित हो गए और जैसा कि उनके एक छात्र को याद है, बोले-'यही है भारत का वास्तविक गौरव, किंतु दुर्भाग्यवश लोग नकली चीजों के पीछे पागल हो उठे हैं। किसी दूसरे देश में सभ्यता का स्तर इतना निम्न नहीं हुआ है। वास्तव में हम अपना गौरव भूल गए हैं।'

संस्कृत के प्रति अनुराग

एक बार रसायनज्ञ आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय, राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद और आचार्य कपिलदेव शर्मा (संस्कृत विद्वान) साथ-साथ पटना से पहलेजा घाट जा रहे थे। रास्ते में शर्मा जी ने आचार्य राय को मक्खन खाने को दिया। आचार्य राय मक्खन खाने लगे और मक्खन से सम्बद्ध कालिदास के 'रघुवंश' महाकाव्य के

हैयंगवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्।
नामधेयानि पृच्छन्तौ वन्यानां मार्गशाखिनाम्॥

आदि श्लोकों को गाने लगे और तब तक गाते रहे जब तक वह सर्ग समाप्त नहीं हो गया।

फिर उन्होंने राजेन्द्र बाबू से पूछा-'राजेन्द्र, तुमने अपनी छात्रावस्था में संस्कृत पढ़ी थी?'

राजेन्द्र बाबू बोले-'परीक्षा के समय 400 श्लोकों को कंठस्थ किया था और जेल में भी थोड़ी संस्कृत पढ़ने का अवसर मिला था। छात्रावस्था में संस्कृत नहीं पढ़ सका था।'

यह सुनकर आचार्य राय बिगड़ पड़े और दुखित होकर बोले-'तुम लोग बिलकुल गिर गए हो, संस्कृत बिना जाने क्या कोई मनुष्य कहला सकता है?'

मातृदेवो भव

सर आशुतोष मुखर्जी कलकत्ता विश्वविद्यालय में कुलपति होने के साथ-साथ कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश भी थे। ऐसे विद्वान, उच्च आदर्शों वाले भारतीय मनीषी को तत्कालीन सरकार ने इंग्लैंड भेजने का निश्चय किया। विदेश-यात्रा का सारा प्रबंध हो गया और सर आशुतोष राजी भी हो गए, मगर ऐन मौके पर उनकी माता ने धार्मिक विचारों के कारण उन्हें विलायत जाने से मना कर दिया।

मां की आज्ञा को सर्वोपरि समझकर सर आशुतोष ने सरकार को लिखा-'मेरे विदेश जाने के बारे में मेरी माता राजी नहीं हैं, अत: मैं असमर्थ हूं।'

पत्र पढ़कर लार्ड कर्जन, जो वाइसराय था, क्रोध से पागल हो उठा-एक भारतीय द्वारा शासन की इतनी उपेक्षा! उसने सर आशुतोष को बुलाकर कहा-'जाओ, अपनी माता से कहो कि भारत का वाइसराय तुम्हारे पुत्र को विलायत जाने का आदेश देता है।'

वाइसराय की बात टालना टेढ़ी खीर थी। वैसे भी कर्जन स्वभावत: कठोर एवं तुनुकमिजाज था। बड़े-बड़े राजा-महाराजा उससे भय खाते थे। लेकिन सर आशुतोष जरा भी विचलित नहीं हुए और गंभीरता से उन्होंने कहा-'मैं अपनी मां की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता। उससे, संसार में किसी भी आज्ञा को श्रेष्ठतर नहीं समझता। हमारी मर्यादा, संस्कृति कहती है-मातृदेवोभव। माता को देवतास्वरूप समझो। अत: इस बारे में आप किसी प्रकार का दबाव डालने की चेष्टा न करें।'

सर आशुतोष की दृढ़ मातृभक्ति देखकर कर्जन का क्रोध शांत हो गया। वह सर आशुतोष पर रीझ भी गया।

रामन् पर 'रामन् प्रभाव'

नोबेल पुरस्कार लेने रामन् स्टाकहोम पहुंचे। वहां मजे हुए चोटी के वैज्ञानिकों के समक्ष रामन् ने अपनी खोज 'रामन् प्रभाव' का प्रयोग करके दिखाया। इस प्रयोग के लिए उन्होंने जिस द्रव को चुना था, वह था-'अल्कोहल'। प्रयोग के बाद उस दिन सायंकाल रामन् के सम्मान में एक समारोह आयोजित किया गया था। रिवाज के मुताबिक सम्मानित व्यक्ति के स्वास्थ्य के नाम पर शराब के प्याले टकराकर पिए जाते हैं। रामन् पूर्ण शाकाहारी थे। वे चाय तो पीते थे, मगर शराब को कभी हाथ तक नहीं लगाया था। उस समय मजाक के मूड में एक वैज्ञानिक ने रामन् से कहा-'आज सुबह आपने अल्कोहल पर 'रामन्-प्रभाव' का प्रयोग करके हमारा मनोरंजन किया। अब आप रामन् पर अल्कोहल (शराब भी अल्कोहल ही है) के प्रभाव का प्रदर्शन करके हमारा पुन: मनोरंजन क्यों नहीं करते?'

पैसा भी गिनना नहीं आता

एक बार आइंस्टाइन बर्लिन में किसी ट्राम से यात्रा कर रहे थे। टिकट के पैसे काट लेने के बाद जो पैसे कंडक्टर ने वापस किए, उन्हें लगा कि कम हैं। अत: उन्होंने कंडक्टर को बुलाकर कम पैसा देने की शिकायत की। उसने दुबारा पैसे गिने। पैसे पूरे निकले। इस पर खीझकर उसने कहा-'मुश्किल तो यह है कि आपको पैसा भी गिनना नहीं आता।'

हिसाब-किताब भी नहीं जानते

जोड़ संबंधी ऐसी ही छोटी-मोटी भूलों से परेशान होकर बैंक के क्लर्क ने श्रीमती आइंस्टाइन से निवेदन किया – 'आपके पति का विज्ञान और गणित में कोई सानी नहीं, पर कृपया उनके बैंक संबंधी कागजों का हिसाब-किताब आप ही रखें, क्योंकि एक बार हिसाब बन जाने पर उसमें काट-छांट करने में असुविधा होती है।'

अपना ही अता-पता नहीं

आयकर के दफ्तर में लोगों की कतार लंबी और बड़ी होती जा रही थी। कारण यह था कि लाइन में लगा पहला व्यक्ति अपना नाम तक नहीं बता पा रहा था। वह अपनी जेब में से कोई लिफाफा या कोई ऐसा कागज ढूंढ़ रहा था, जिससे वह क्लर्क को अपना नाम बता सके।

समस्या तब हल हुई जब पीछे वाले आदमी ने आगे बढ़कर कहा, 'मैं इन्हें जानता हूं। इनका भी दफ्तर मेरे ब्लॉक में है। ये हैं-थामस अल्वा एडिसन।'

दोस्तों को मजा चखाने में

एडिसन के दोस्त उनकी सिगार मुफ्त में पी जाते थे। इससे तंग आकर उन्होंने सेल्समैन से गोंद, घोड़ों के बाल या और भी दुर्गंधयुक्त पदार्थों से युक्त सिगार बनाने का आर्डर दे दिया। इस प्रकार वह रद्दी सिगार पिलाकर अपने दोस्तों को मुफ्त माल उड़ाने का मजा चखाना चाहते थे। कुछ दिनों बाद जब सेल्स-मैन सामने पड़ गया तो उन्होंने उससे सिगारों के अब तक न भेजे जाने की शिकायत की और शीघ्र भेजने का आग्रह किया। मगर सेल्समैन हैरान था-'सर, मैंने तो आज से तीन सप्ताह पूर्व ही सिगारों के पैकेट भेज दिए थे।'

वास्तव में अपने काम की उधेड़-बुन में व्यस्त एडिसन खुद ही सारे रद्दी सिगार पी चुके थे।

दूल्हा ही गायब

शादी के लिए दुल्हन तैयार और पादरी महाशय भी तैयार बैठे थे। दूल्हे और दुल्हन के घरवाले भी तैयार। मगर ऐन मौके पर दूल्हा गायब। जब खोज प्रारंभ हुई तो लुई पाश्चर महोदय मिले अपनी प्रयोगशाला में। बोतलों, टेस्ट-ट्यूबों के बीच उन्हें अपनी शादी की तारीख तक याद नहीं।
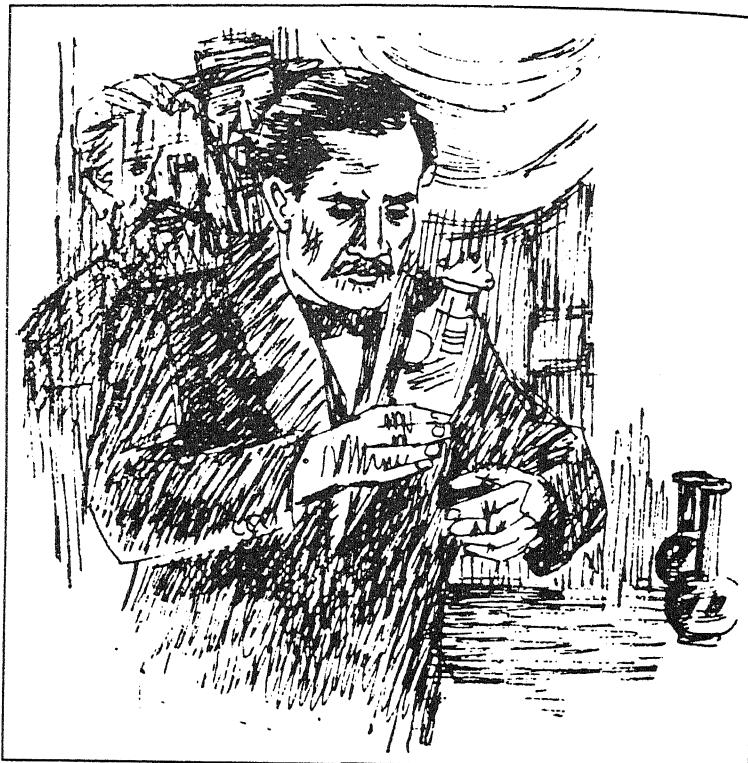
घोड़े से कब उतरे

न्यूटन एक बार घोड़े पर बैठकर अपने गांव जा रहे थे। रास्ते में पहाड़ी पड़ी तो चट्टान के कारण घोड़े से नीचे उतर गए ताकि घोड़े को कोई तकलीफ न हो और उसकी रास पकड़कर पैदल चलने लगे। ठीक उसी समय कोई गणित-संबंधी समस्या उनके मस्तिष्क में आयी और वे उसे सुलझाने में व्यस्त हो गए। जब सवाल हल हो गया और उनकी तंद्रा टूटी तो उन्होंने देखा कि घोड़ा घर की ओर लौट रहा है और उसके पीछे-पीछे न्यूटन भी चले आ रहे हैं।

अंडों की बजाय घड़ी उबाली

यदि पाश्चर को अपनी शादी की तारीख याद नहीं रही तो न्यूटन ही कहां कम थे। एक बार उनका नौकर घड़ी और अंडे देकर किसी काम से चला गया और कहता गया कि इतने समय बाद अंडे उबालकर नाश्ता कर लें। मगर अपने काम की धुन में न्यूटन ने अंडों की जगह घड़ी उबाल डाली।

नाश्ता कब किया?

एडिसन प्रात: रात में देर तक या कभी-कभी सारी रात प्रयोगशाला में काम करते थे। एक दिन सुबह नाश्ते के समय रात में जागने के कारण उन्हें झपकी आ गयी। नौकर को मजाक सूझी और उसने खाली प्लेट मेज पर रखकर भरी प्लेट वहां से हटा ली। जब आंख खुली तो एडिसन ने मेज पर खाली प्लेट देखी। क्षण भर सोचते रहे और मन-ही-मन यह निष्कर्ष निकालकर कि मैंने नाश्ता कर लिया है, पुन: काम में जुट गए। बाद में नौकर के भेद खोलने पर ही उनको इस बात की जानकारी हुई।

पूरियों में हवा कैसे भरी जाती है?

जब मैडम क्यूरी भारत आयीं तो डॉ. शांतिस्वरूप भटनागर के घर ठहरी थीं। एक दिन जब उन्होंने भारतीय व्यंजन खाने की इच्छा जाहिर की तो पूरियां बनाई गईं। पूरियां उन्हें बहुत पसन्द आयीं। फूली-फूली पूरियों को देखकर, आश्चर्यचकित हो, उन्होंने डॉ. भटनागर से पूछा - 'पूरियों में हवा भरने का जो तरीका भारतीयों को आता है, मुझे भी सिखा देंगे?''

किताबी शौक

डॉ. शातिस्वरूप भटनागर अच्छे वैज्ञानिक और प्रशासक तो थे ही, अच्छे शायर भी थे। किताबों के पढ़ने का उन्हें बड़ा शौक था।

अपनी पत्नी के प्रति वे बड़ा स्नेह रखते थे। 1946 में पत्नी की मृत्यु हो जाने पर काफी दु:खी और उदास रहने लगे। उनकी पत्नी उनके पुस्तक-प्रेम को किस दृष्टि से देखती थीं, डॉ. भटनागर के इस शेर से ज़ाहिर है:

'मुझसे बीबी ने कहा एक दिन

जो मैं होती किताब।

तेरे दीदये शौक से

हर वक्त रहती फैजयाब।'

विभागाध्यक्ष बनने के लिए शादी

जेम्स यंग सिम्पसन ने 1832 में प्रसूति विज्ञान में एम. डी. की उपाधि प्राप्त की और पैथोलॉजी के प्रोफेसर डॉ. जॉन थाम्पसन के सहायक के रूप में कार्य करने लगे। 1839 में एडिनबरा में प्रसूति विज्ञान विभाग के अध्यक्ष का पद खाली हुआ। डॉ. थाम्पसन के कहने पर सिम्पसन ने भी आवेदन कर दिया। उस समय उनकी उम्र थी कुल जमा 24 वर्ष। अध्यक्ष का चुनाव नगर परिषद् के सदस्यों द्वारा किया जाता था अत: सदस्यों का वोट प्राप्त करने के लिए काफी प्रचार की आवश्यकता थी।

और तो सब ठीक चल रहा था पर सिम्पसन का उत्साह उस समय फीका पड़ने लगा जब उन्हें पता चला कि उनका प्रतिद्वंद्वी कैनेडी उनसे उम्र में बड़ा होने के साथ-साथ विवाहित भी है। चूंकि उन दिनों प्रसूति विभाग में विवाहित व्यक्तियों की ही नियुक्ति पसंद की जाती थी, अत: सिम्पसन ने सोच लिया कि उनकी पराजय पक्की है।

इसी उधेड़-बुन में सिम्पसन के दिमाग में एक विचार आया और वे एकाएक गायब हो गए। शीघ्र ही, लिवरपूल में अपना विवाह करके, सपत्नीक घर वापस आ गए। चुनाव हुआ और सिम्पसन एक वोट से विजयी घोषित हुए। और इस तरह सिम्पसन ने प्रसूति विज्ञान विभाग का अध्यक्ष बनने के लिए शादी की, तब कहीं जाकर अध्यक्ष का गौरवशाली पद युवा सिम्पसन को मिला।

कंजूस पत्नी

प्रख्यात गणितज्ञ डेविड हिलबर्ट टहलते हुए चले जा रहे थे। रास्ते में प्रसिद्ध भौतिकीविद् जेम्स फ्रैंक से उनकी मुलाकात हो गई। हिलबर्ट ने उनसे पूछा-'क्या तुम्हारी पत्नी भी मेरी पत्नी की तरह कंजूस है?'

ऐसा प्रश्न सुनकर फ्रैंक को बड़ी हैरानी हुई। फिर भी उन्होंने पूछा-'आखिर ऐसा क्या किया आपकी पत्नी ने?'

हिलबर्ट का जवाब था-'मुझे आज ही सुबह पता चला कि मेरी पत्नी नाश्ते में मुझे अंडा नहीं देती। ईश्वर ही जानता है कि कितने दिनों से वह ऐसा मेरे साथ करती आ रही है?'
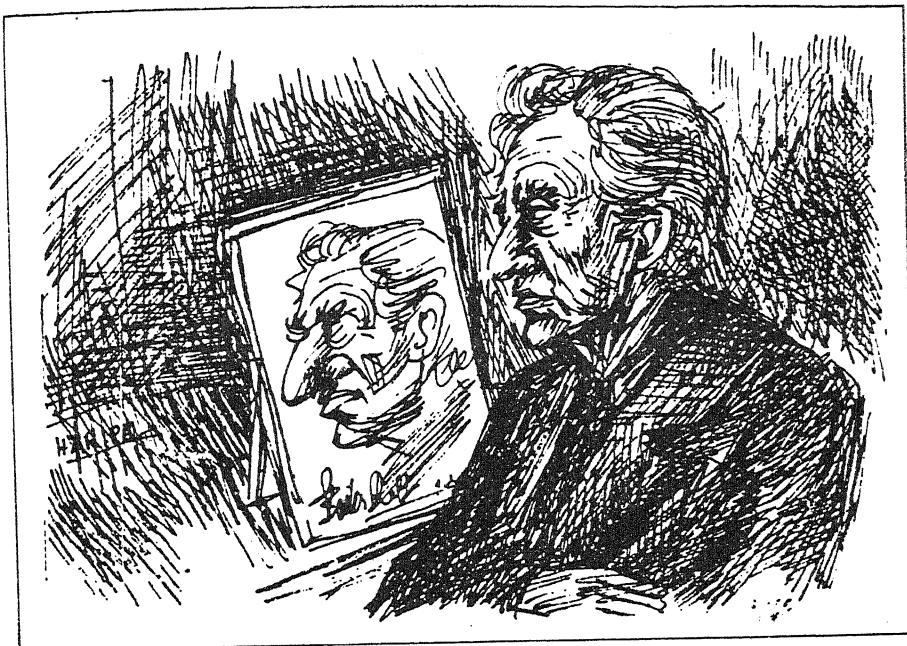
पुनर्विचार

श्री स्पेन्स नाम के एक सज्जन ने रसेल को पत्र लिखा–'मैं एक अवकाश–प्राप्त वृद्ध हूं और हॉबी के रूप में रेखा–चित्र बनाता हूं। संलग्न स्केच पर आप अपने हस्ताक्षर कर देंगे, तो अपने को मैं बड़ा सौभाग्यशाली समझूंगा।'

अगली डाक से स्पेन्स महोदय को रसेल का उत्तर मिला–'मैंने स्केच पर हस्ताक्षर कर दिए हैं, परन्तु मुझे आशा है कि आप मेरी नाक की बनावट पर पुनः विचार करेंगे।'

मैं भी अनपढ़

एक बार आइंस्टाइन किसी होटल में गए। बैरे को बुलाकर मीनू पढ़ने को कहा क्योंकि वह अपना चश्मा भूल आए थे। बैरे ने सारे खाद्य एवं पेय पदार्थों की लिस्ट जबानी सुना दी, लेकिन आइंस्टाइन ने जिद की कि लिस्ट पढ़कर ही सुनाओ।

बैरा पहले तो झिझकता रहा। फिर बोला–'बात दरअसल यह है साहब कि आपकी ही तरह मैं भी अनपढ़ हूं।'

इतनी बड़ी दूरबीन किसलिए?

कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी ने एक बार आइंस्टाइन को भाषण देने के लिए आमंत्रित किया। साथ में उनकी पत्नी भी थी। जब भाषण खत्म हो गया तब वे लोग माउंट विल्सन स्थित वेधशाला देखने गए। वहां उस समय तक की दुनिया की सबसे बड़ी दूरबीन (टेलिस्कोप) लगी थी।

इतनी बड़ी दूरबीन को देखकर वेधशाला के अध्यक्ष से श्रीमती आइंस्टाइन ने पूछा—'भला इतनी बड़ी दूरबीन आपके किस काम आती है?'

अध्यक्ष ने बताया 'ब्रह्मांड की रचना समझने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता है।'

श्रीमती आइंस्टाइन विस्मय से बोलीं-'हैरत की बात है। मेरे पति तो यह सब काम प्रायः पुराने लिफाफों के कागज पर करते हैं।'

दूरबीन बनाम खिलौना

जब दूरबीनों की बात चली है तो इसी से संबंधित आइंस्टाइन का एक और किस्सा सुनिए। बर्लिन में रहते समय आइंस्टाइन के अध्ययन-कक्ष में उनकी मेज पर न्यूटन का एक चित्र रहा करता था और पास में ही एक दूरबीन। उनसे मिलने वाले जब पूछते कि इस दूरबीन से क्या वे पर्यवेक्षण करते हैं, तो आइंस्टाइन का उत्तर हुआ करता था-'नहीं, मैं इससे आसमान के तारे नहीं देखता। यह तो इस मकान में रहने वाला पहला किरायेदार छोड़ गया है, महज खिलौने के तौर पर मैंने इसे रख छोड़ा है।'

आत्म-विनोद

हंसने-हंसाने की कला बहुत कम लोगों को आती है, उस पर खुद पर हंसने की कला तो और भी कम। प्रो. पंचानन माहेश्वरी में यह दुर्लभ गुण था और खूब था।

अपने विद्यार्थियों को वह अपने बारे में एक किस्सा अकसर सुनाया करते थे—

'बोस्टन (अमेरिका) से अपने देश लौटते समय एक हवाई जहाज से दूसरे पर जाने के दौरान मेरे नाम में विस्मयकारी परिवर्तन होता गया। जब मैं वहां से चला तो मिस्टर पंचानन माहेश्वरी था। जल्दी ही मैं महेशबारी हो गया औरं फिर एम. बारी। और अंत में कराची पहुंचते-पहुंचते मेरे नाम का जितना हिस्सा बचा रह गया, वह था-मिस्टर बारे।'

एक दिन जब मैं उन्हें 'नगरवधू' की एक प्रति देने गया, तब शिकंजवीन का गिलास देते हुए बोले-'म्लेच्छ भाषा तो तुम अच्छी लिखते ही हो, यह किताब भी जरूर बढ़िया लिखी होगी।' किंतु इतने में ही एक संभ्रांत राज-पुरुष आ गए। उनके समक्ष जो उन्होंने मेरा लंबा-चौड़ा परिचय दिया तो मेरी आंखें गीली हो गईं। मैंने कहा-'अब इनके सामने भी तो 'म्लेच्छ भाषा' की बात कहो।' तब हंसकर बोले-'एक गिलास शिकंजवीन इनकी खातिर और पिओ।'

सापेक्षता का कमाल

अमेरिकी अभिनेता चार्ली चैपलिन ने आइंस्टाइन को 'सिटी लाइट्स' फिल्म के प्रीमियर शो पर आमंत्रित किया। प्रीमियर के दिन आइंस्टाइन समारोह में पहुंचे। उनके पहुंचते ही तमाम लोगों ने आइंस्टाइन को घेर लिया और चैपलिन अकेले पड़ गए। आइंस्टाइन को हैरानी हुई। उन्होंने पूछा-'भई, यह भी क्या हुआ?'

हाजिर-जवाब चैपलिन बोले-'आपके सापेक्षता (रिलेटिविटी) का ही यह कमाल है।'

आपका कोट मेरा जूता लाने गया है

कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति (वाइस चांसलर) और गणितज्ञ सर आशुतोष मुखर्जी एक बार सीधे-सादे कपड़ों में प्रथम श्रेणी के डिब्बे में यात्रा कर रहे थे। उसी डिब्बे में एक अंग्रेज भी बैठा था। उसे अपने साथ एक भारतीय का सफर करना अच्छा नहीं लगा। उसने कई बार सर आशुतोष से डिब्बा बदलने के लिए कहा लेकिन उन्होंने उसकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया।

अंग्रेज का गुस्सा बढ़ता गया और रात में जब सर आशुतोष सो गए तो उसने उनका जूता उठाकर खिड़की से बाहर फेंक दिया।

थोड़ी देर में सर आशुतोष की नींद खुली तो उन्होंने अपना जूता नदारद पाया। उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि यह किसने किया है। अंग्रेज खर्राटे भर रहा था। उन्होंने उसका टंगा कोट उठाया और बाहर फेंक दिया, फिर बैठकर आराम करने लगे। थोड़ी देर बाद जब अंग्रेज उठा तो उसने चारों ओर देखकर पूछा-'मेरा कोट?'

सर आशुतोष ने मुसकराते हुए जवाब दिया-'आपका कोट मेरा जूता लेने गया है।'

इतनी बड़ी दूरबीन किसलिए?

कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी ने एक बार आइंस्टाइन को भाषण देने के लिए आमंत्रित किया। साथ में उनकी पत्नी भी थी। जब भाषण खत्म हो गया तब वे लोग माउंट विल्सन स्थित वेधशाला देखने गए। वहां उस समय तक की दुनिया की सबसे बड़ी दूरबीन (टेलिस्कोप) लगी थी।

इतनी बड़ी दूरबीन को देखकर वेधशाला के अध्यक्ष से श्रीमती आइंस्टाइन ने पूछा—'भला इतनी बड़ी दूरबीन आपके किस काम आती है?'

अध्यक्ष ने बताया 'ब्रह्मांड की रचना समझने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता है।'

श्रीमती आइंस्टाइन विस्मय से बोलीं-'हैरत की बात है। मेरे पति तो यह सब काम प्रायः पुराने लिफाफों के कागज पर करते हैं।'

दूरबीन बनाम खिलौना

जब दूरबीनों की बात चली है तो इसी से संबंधित आइंस्टाइन का एक और किस्सा सुनिए। बर्लिन में रहते समय आइंस्टाइन के अध्ययन-कक्ष में उनकी मेज पर न्यूटन का एक चित्र रहा करता था और पास में ही एक दूरबीन। उनसे मिलने वाले जब पूछते कि इस दूरबीन से क्या वे पर्यवेक्षण करते हैं, तो आइंस्टाइन का उत्तर हुआ करता था-'नहीं, मैं इससे आसमान के तारे नहीं देखता। यह तो इस मकान में रहने वाला पहला किरायेदार छोड़ गया है, महज खिलौने के तौर पर मैंने इसे रख छोड़ा है।'

आत्म-विनोद

हंसने-हंसाने की कला बहुत कम लोगों को आती है, उस पर खुद पर हंसने की कला तो और भी कम। प्रो. पंचानन माहेश्वरी में यह दुर्लभ गुण था और खूब था।

अपने विद्यार्थियों को वह अपने बारे में एक किस्सा अकसर सुनाया करते थे—

'बोस्टन (अमेरिका) से अपने देश लौटते समय एक हवाई जहाज से दूसरे पर जाने के दौरान मेरे नाम में विस्मयकारी परिवर्तन होता गया। जब मैं वहां से चला तो मिस्टर पंचानन माहेश्वरी था। जल्दी ही मैं महेशबारी हो गया औरं फिर एम. बारी। और अंत में कराची पहुंचते-पहुंचते मेरे नाम का जितना हिस्सा बचा रह गया, वह था-मिस्टर बारे।'

मन रखने के लिए

अपने समय के सबसे बड़े इंजीनियर सर क्रिस्टोफर रेन ने जब इंग्लैंड के सेंट पाल गिरजाघर का नक्शा पेश किया तो पादरियों ने उसे यह कहकर अस्वीकृत कर दिया कि गिरजे के विशाल गुम्बद का बिना किसी स्तंभ के सहारे टिका रहना असंभव है। रेन ने उन्हें लाख समझाया पर वे न माने। निदान उन्हें स्तंभ खड़ा करना पड़ा।

कुछ अरसे बाद सफाई करने वाले गुम्बद के ऊपर गए तो उन्होंने देखा–गुंबद बिना स्तंभ के सहारे खड़ा है। उसके और स्तंभ के बीच एक इंच का फासला है। वस्तुतः क्रिस्टोफर रेन ने यह स्तंभ अनाड़ी पादरियों का मन रखने के लिए ही खड़ा कर दिया था।

किससे पढ़वाया?

प्रसिद्ध वैज्ञानिक उपन्यासकार एच. जी. वेल्स को हालीवुड की एक प्रसिद्ध अभिनेत्री ने पत्र लिखा कि उसे उनकी पुस्तक 'शेप ऑफ थिंग्स टु कम' बहुत पसंद आयी। फिर उसने पूछा कि यह पुस्तक उन्होंने किससे लिखवाई थी?

वेल्स ने उत्तर दिया–'मुझे जानकर प्रसन्नता हुई कि पुस्तक आपको पसंद आयी, पर यह पुस्तक आपने किससे पढ़वाई थी?'

हमेशा ठीक नहीं

प्रसिद्ध आनुवंशिकीविद् जी. वी. एस. हाल्डेन एक बार किसी महिला से बात कर रहे थे। बात ऐसे विषय पर चल रही थी कि परिणाम का सहज अनुमान नहीं लगाया जा सकता था। लेकिन फिर भी महिला ने कहा–'अधिक बातें करने की जरूरत नहीं है, मैं जानती हूं कि तुम क्या कहने वाले हो।'

यह बात हाल्डेन को कुछ अच्छी नहीं लगी। वे फर्श पर चित लेट गए और दो बार कलाबाजी खाकर अपने पूर्व स्थान पर बैठते हुए उन्होंने कहा–'यह मैंने इसलिए किया ताकि यह सिद्ध हो जाय कि तुम जो कुछ कहती हो, वह हमेशा ठीक ही नहीं होता।'

इंटरव्यू का नतीजा

हाल्डेन का एक किस्सा और सुनिये। हाल्डेन के अनुसंधानों से प्रभावित होकर एक अविवाहित महिला संवाददाता शार्लोत वर्गेज कैंब्रिज विश्वविद्यालय में उनका इंटरव्यू लेने पहुंची। इंटरव्यू का परिणाम यह हुआ कि दोनों को एक-दूसरे से प्यार हो गया और उन्होंने शादी कर ली।

यात्रा-भीरु

प्रसिद्ध विज्ञान--कथा-लेखक जूल्सबर्न एक बार अपने किसी मित्र के घर मिलने गए। मित्र थे नहीं, अत: वह उनके घर बैठकर उनकी प्रतीक्षा करने लगे। एक और सज्जन उनकी बाट जोह रहे थे। जब उन्हें यह पता चला कि सामने वाले सज्जन जूल्सबर्न हैं, तो वे उन्हें आराम पहुंचाने को चिंतित हो उठे और बोले-'बर्न महोदय, आप थके-मादे होंगे। आराम से बैठिए। आप कितने दुस्साहसी हैं! कैसी खतरनाक यात्राएं करते रहते हैं!'

उनको यह नहीं पता था कि बर्न ने सारे उपन्यास एक बंद कमरे में ही बैठकर लिखे थे और वास्तव में वे ऐसे यात्रा-भीरु थे कि शायद ही कभी सौ मील से अधिक का सफर किया होगा। संभवत: बर्न के 'ए जर्नी इन टु दि सेंटर ऑफ अर्थ' (धरती के गर्भ की यात्रा) और 'राउंड दि वर्ल्ड इन एट्टी डेज' (अस्सी दिन में दुनिया की सैर) सरीखे वैज्ञानिक उपन्यासों को पढ़कर उन्होंने सोचा होगा कि बर्न ने इतनी खतरनाक यात्राएं करने के बाद इन यात्रा-वृत्तांतों को लिखा होगा।

म्लेच्छ भाषा

प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. शांति स्वरूप भाटनागर और हिन्दी के लेखक चतुरसेन शास्त्री बचपन के मित्र थे। शास्त्री जी 'यादें' में लिखते हैं—

'शांति स्वरूप दिल्ली आ गए। लेकिन मैं बहुत कम उनसे मिलता-जुलता था। बहुधा फोन पर उनसे कुशल-क्षेम हो जाती थी। जब भारत के स्वतंत्र होने पर विकास और निर्माण में इस जादूगर ने भारत में जीवन फूंका तो मैं आनंद और उल्लास से उसकी स्मृति में मग्न हो जाता था। हां, कभी कोई पुस्तक निकलती तो उसे भेंट करने अवश्य जाता था।'

वे उर्दू के मार्मिक कवि थे, यह सब जानते हैं। पर कविता वह हिन्दी में भी करते थे। मुझे चिढ़ाते हुए वह हिन्दी को सदा म्लेच्छ भाषा कहते थे।

एक दिन जब मैं उन्हें 'नगरवधू' की एक प्रति देने गया, तब शिकंजवीन का गिलास देते हुए बोले- 'म्लेच्छ भाषा तो तुम अच्छी लिखते ही हो, यह किताब भी जरूर बढ़िया लिखी होगी।' किंतु इतने में ही एक संभ्रांत राज-पुरुष आ गए। उनके समक्ष जो उन्होंने मेरा लंबा-चौड़ा परिचय दिया तो मेरी आंखें गीली हो गईं। मैंने कहा-'अब इनके सामने भी तो 'म्लेच्छ भाषा' की बात कहो।' तब हंसकर बोले- 'एक गिलास शिकंजवीन इनकी खातिर और पिओ।'

सापेक्षता का कमाल

अमेरिकी अभिनेता चार्ली चैपलिन ने आइंस्टाइन को 'सिटी लाइट्स' फिलम के प्रीमियर शो पर आमंत्रित किया। प्रीमियर के दिन आइंस्टाइन समारोह में पहुंचे। उनके पहुंचते ही तमाम लोगों ने आइंस्टाइन को घेर लिया और चैपलिन अकेले पड़ गए। आइंस्टाइन को हैरानी हुई। उन्होंने पूछा-'भई, यह भी क्या हुआ?'

हाजिर-जवाब चैपलिन बोले-'आपके सापेक्षता (रिलेटिविटी) का ही यह कमाल है।'

आपका कोट मेरा जूता लाने गया है

कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति (वाइस चांसलर) और गणितज्ञ सर आशुतोष मुखर्जी एक बार सीधे-सादे कपड़ों में प्रथम श्रेणी के डिब्बे में यात्रा कर रहे थे। उसी डिब्बे में एक अंग्रेज भी बैठा था। उसे अपने साथ एक भारतीय का सफर करना अच्छा नहीं लगा। उसने कई बार सर आशुतोष से डिब्बा बदलने के लिए कहा लेकिन उन्होंने उसकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया।

अंग्रेज का गुस्सा बढ़ता गया और रात में जब सर आशुतोष सो गए तो उसने उनका जूता उठाकर खिड़की से बाहर फेंक दिया।

थोड़ी देर में सर आशुतोष की नींद खुली तो उन्होंने अपना जूता नदारद पाया। उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि यह किसने किया है। अंग्रेज खर्राटे भर रहा था। उन्होंने उसका टंगा कोट उठाया और बाहर फेंक दिया, फिर बैठकर आराम करने लगे। थोड़ी देर बाद जब अंग्रेज उठा तो उसने चारों ओर देखकर पूछा-'मेरा कोट?'

सर आशुतोष ने मुसकराते हुए जवाब दिया-'आपका कोट मेरा जूता लेने गया है।'

बदलने की क्या जरूरत?

मोटर उद्योग के जनक हेनरी फोर्ड का कोट पुराना होकर फटने लगा था। एक दिन उनके सेक्रेटरी ने कहा कि आपका कोट काफी पुराना हो गया है, अत: नया सिलवा लीजिए। फोर्ड मुसकराकर बोले–'नये कोट की क्या जरूरत है? इसी की मरम्मत करवा लेंगे।' सेक्रेटरी चुप हो गया। वह अवसर की तलाश में था।

एक दिन फोर्ड को अच्छे मूड में पाकर उसने कोट का जिक्र फिर छेड़ा–'सर, आप बड़े आदमी हैं, आपको फटे-पुराने कोट में देखकर लोग क्या कहते होंगे?'

'कहेंगे क्या? अमेरिका में तो सभी मुझे जानते हैं कि मैं हेनरी फोर्ड हूं।' सचिव चुप हो गया।

आखिर एक ऐसा अवसर आ ही गया, जब लगा कि सेक्रेटरी के मन की साध पूरी हो जाएगी। फोर्ड को किसी काम से इंग्लैंड जाना पड़ गया।

ऐसे मौके पर सेक्रेटरी ने निवेदन किया–'सर, अमेरिका में तो सभी आपको जानते हैं। लेकिन आप विदेश-यात्रा पर जा रहे हैं, अत: ऐसे मौके पर आपको नया कोट सिलवा ही लेना चाहिए।'

फोर्ड ने जवाब दिया–'कोट बदलने की क्या जरूरत है? इंग्लैंड में भला कौन जानता है कि मैं फोर्ड हूं?'

अब तो बेचारे सेक्रेटरी के पास कहने के लिए कुछ नहीं शेष था।

संकोचशील

हाइड्रोजन गैस के आविष्कारक हेनरी कैवेंडिश बड़े संकोचशील स्वभाव के थे। उन्हें किसी व्यक्ति से मिलना-जुलना कतई पसंद नहीं था। एक बार एक प्रतिष्ठित सज्जन ने उनके सम्मान में प्रीतिभोज दिया। वहां उनकी भेंट एक विद्वान से कराई गयी, जो बाहर से आए हुए थे। उन सज्जन ने कैवेंडिश के आविष्कारों की चर्चा छेड़ दी और कुछ बात करनी चाही पर किसी तरह जान बचाकर कैवेंडिश पीछे के दरवाजे से निकल भागे।

धन का उपयोग

कैवेंडिश के जीवन में धन का कोई मूल्य न था। उनके पास बैंक में अकूत धन पड़ा था, जिसको वे कभी छूते भी न थे। एक दिन बैंक का एक कर्मचारी आया और बोला-'आपकी इतनी भारी राशि बैंक में जमा है, उसका आप कोई उपयोग क्यों नहीं करते?'

कैवेंडिश फट पड़े-'उसे उसी तरह पड़ा रहने दो। याद रखो, यदि तुमने इस बाबत फिर कभी मुझे तंग किया तो मैं सारा रुपया निकालकर किसी दूसरे बैंक में डाल दूंगा।'

रहस्यमय जीवन

कैवेंडिश का जीवन बड़ा रहस्यमय था। उन्हें स्त्रियों से बड़ी घृणा थी। यदि कोई नौकरानी उनके सामने पड़ जाती तो वह तुरंत निकाल दी जाती। लेकिन विरोधाभास देखिए, जो व्यक्ति जीवन भर स्त्रियों से घृणा करता रहा, मरने के बाद उसकी अलमारी से एक बेशकीमती साड़ी मिली। हालांकि उस साड़ी का रहस्य अंत तक बना ही रहा।

औरतों से ही क्या, मनुष्यों से भी कैवेंडिश को घृणा थी। जब कैवेंडिश का अंत समय आया तो उन्होंने अपने नौकर से बाहर चले जाने को कहा। जब नौकर लौटकर आया तो कैवेंडिश के प्राण-पखेरू उड़ चुके थे।

उसने रबड़ की चादर ओढ़ ली

रबड़ उद्योग में चार्ल्स गुडइयर का बड़ा नाम है। 'वल्केनाइज्ड' रबड़ बनाने का श्रेय गुडइयर को ही है। रबड़ को उपयोगी बनाने के पीछे मानो वह पागल हो गया था। अनुसंधान के दौरान अकसर उसे, पैसे की तंगी के कारण, भूखे पेट सो जाना पड़ता। रबड़ के प्रचार के लिए उसने रबड़ की चद्दर खुद ओढ़ी। उन दिनों लोग उस पर इन शब्दों में फिकरा कसते-'यदि आपको एक आदमी ऐसा दिखाई पड़े जो 'इंडियन रबड़' का कोट, जूते और टोप पहने हुए हो और उसकी जेब में रबड़ का पर्स भी हो, जिसमें एक भी सेंट (पैसा) न हो तो समझ लीजिए कि वह मिस्टर गुडइयर हैं।' फिर भी गुडइयर अपने मार्ग से विमुख न हुआ। और एक दिन विजयश्री उसे हासिल हुई ही।

कौन-कौन से उपकरण?

बढ़ते नाजीवाद के विरोध के लिए ही आइंस्टाइन ने जर्मनी छोड़ दिया और अमेरिकी नागरिक बन गए। सन् 1933 में न्यू जर्सी स्थित प्रिंस्टन के 'इंस्टीट्यूट फॉर एडवान्स्ड स्टडीज' में वह भौतिकी के अध्यापक नियुक्त हुए और अंतिम समय तक वहीं रहे।

जब वह पहली बार प्रिंस्टन आए तो वहां के प्रशासनिक अधिकारी ने पूछा-'मैं आपके लिए कौन-कौन से उपकरणों की व्यवस्था कर दूं?'

आइन्स्टाइन का उत्तर था-'मुझे केवल ब्लैक-बोर्ड, कुछ चाक, थोड़े से कागज और पेंसिल चाहिए।' थोड़ा रुककर, जैसे उन्हें एकाएक कुछ याद आ गया हो, बोले—'और हां, एक बड़ी-सी टोकरी भी।'

अधिकारी ने पूझा-'किसलिए?'

'क्योंकि मैं अपने कैलकुलेशन्स में जगह-जगह गलतियां करूंगा और छोटी टोकरियां जल्दी भर जायेंगी।' - आइंस्टाइन का उत्तर था।

जब मैडम क्यूरी नौकरानी बनीं

प्रसिद्धि से बचने का मैडम क्यूरी का सबसे अच्छा और आसान तरीका था रोजमर्रा की साधारण सी वेशभूषा में रहना। एक दिन एक अमेरिकी अखबार का प्रतिनिधि धोखा खा ही गया। जब उसे यह पता चला कि क्यूरी दम्पति एक छोटे-से गांव में छुट्टियां बिता रहे हैं तो वह अंतरंग साक्षात्कार के लिए उस गांव चला गया और पूछते-पूछते उस घर तक भी वह पहुंच गया जहां वे लोग रहते थे।

घर के सामने बैठी एक साधारण-सी स्त्री को देखकर उसने पूछा-'क्या तुम इस घर की नौकरानी हो?'

'जी हां,' स्त्री ने कहा।

'क्या मदाम क्यूरी घर में है?'

'नहीं, वे बाहर गयी हैं।'

'कब तक लौटेंगी?'

'मैं नहीं बता सकती, जाने कब लौटें।'

जमीन पर बैठते हुए, घनिष्ठता का प्रदर्शन करते हुए पत्रकार ने कहा-'क्या तुम उनकी कोई व्यक्तिगत बात बता सकती हो?'

'केवल एक बात।' महिला ने कहा – 'जो मदाम ने मुझे संवाददाताओं को कहने के लिए विशेष रूप से बतायी थी, वह यह कि मनुष्यों के व्यक्तिगत जीवन के बारे में कम जानने की कोशिश करो, उनके विचारों के बारे में अधिक।'

आप समझ ही गये होंगे कि वह साधारण वेशभूषा वाली महिला कौन थी? जी हां, वह मदान क्यूरी ही थीं।

देशभक्ति

उसके देश को रौंदने वाले अत्याचारी शासकों के प्रति मान्या (मेरी क्यूरी) के मन में बड़ी घृणा थी। स्कूल जाते समय उसे एक बड़ी-सी प्रस्तर मूर्ति के पास से गुजरना होता। वह मूर्ति थी-राजा के प्रति वफादार पोल (तत्कालीन रूसी शासन के प्रति वफादार) की। मान्या बिना नागा उस पर थूकती। यदि किसी दिन वह ऐसा करना भूल जाती तो अपनी 'भूल' सुधारने के लिए लौटकर आती, चाहे ऐसा करने में स्कूल में वह भले ही देर से पहुंचती।

परीक्षार्थी या परीक्षक?

परमाणु बम के जनक रॉबर्ट ओपन हाइमर के विद्यार्थी जीवन की घटना है। केवल तेईस वर्ष की अवस्था में उन्हें डॉक्टरेट की उपाधि मिल चुकी थी।

उनकी थीसिस के परीक्षक थे-भौतिकविज्ञानी जेम्स फ्रैंक। मौखिक परीक्षा के बाद जब फ्रैंक से किसी ने पूछा कि ओपन हाइमर ने कैसा किया तो उनका उत्तर था-'उलटे उसने ही मुझसे प्रश्न करना आरम्भ कर दिया था। अच्छा हुआ कि मौका पाते ही मैं वहां से भाग निकला।'

कितना बड़ा भगवान ?

प्रिंस्टन के प्रसिद्ध खगोलशास्त्री हेनरी रसल 'आकाशगंगा' पर भाषण दे रहे थे। जब भाषण समाप्त हो गया तो एक स्त्री ने उनसे पूछा-'यदि ब्रह्मांड इतना बड़ा है तो भला ईश्वर हमारा ध्यान कैसे रखता होगा?'

'मैडम, वह इस पर निर्भर करता है कि आप कितने बड़े भगवान में विश्वास रखती हैं।' रसेल का उत्तर था।

काम की चीज

समारोह में सम्मान के रूप में प्राप्त होने वाले गाउन, पदक, उपाधियां आदि मिलते ही मदाम क्यूरी उतार फेंकतीं। इतना ही नहीं, उत्सवों और भोजों के पश्चात् तो वे अपने पास सिर्फ एक ही चीज़ रखती

थीं। वह चीज़ हुआ करती थी : गत्ते का वह टुकड़ा जिस पर मीनू लिखा रहता था। बात यह थी कि मोटे और कड़े गत्ते के ये टुकड़े गणित के प्रश्न हल करने के लिए बहुत अच्छे रहते थे।

छिद्रान्वेषण

एक बार एक धार्मिक गुरु (कार्डिनल) की भेंट आइंस्टाइन से हुई। बातचीत के दौरान आइंस्टाइन ने कहा-'मैं धर्म का तो आदर करता हूं लेकिन मेरा विश्वास गणित में है। शायद आपकी धारणा इसके विपरीत होगी।'

कार्डिनल ने कहा-'आप गलती पर हैं। मेरे लिए धर्म और गणित एक ही ईश्वरीय यथार्थता की विभिन्न अभिव्यक्तियां हैं।'

आइंस्टाइन ने प्रतिवाद किया-'लेकिन अगर किसी दिन गणितीय विज्ञान यह सिद्ध कर दे कि उसकी कुछ खोजें धार्मिक मान्यताओं के विरुद्ध हैं तो आप क्या कहेंगे?'

'ओह, गणित के लिए मेरे मन में सर्वोच्च आदर है। प्रोफेसर साहब, मुझे यकीन है कि उस हालत में आप लोग तब तक चैन नहीं लेंगे जब तक आप यह पता नहीं लगा लेंगे कि आपकी गलती कहां थी?' कार्डिनल ने दिलासा दिलाया।

सदुपयोग

सुप्रसिद्ध नीग्रो वैज्ञानिक जार्ज वाशिंग्टन कार्वर ने अपने जीवन भर की सारी कमाई अमेरिका के एलाबामा बैंक में जमा कर दी थी। बैंक का दिवाला पिट गया और इस तरह उसमें जमा कार्वर की सारी पूंजी जाती रही। उन्हें करीब 70,000 डालर का नुकसान हुआ।

उनके एक मित्र ने हमदर्दी जताते हुए इस बात की चर्चा की, तब कार्वर बोले-'मेरा ख्याल है कि किसी ने उस पैसे का सदुपयोग ही किया होगा क्योंकि मैं स्वयं उसका कोई उपयोग नहीं कर रहा था।'

सामूहिक आत्माहुति

प्रसिद्ध आविष्कारक बेंजामिन फ्रैंकलिन का अमेरिकी राजनीतिक जीवन में बड़ा हाथ था। फ्रैंकलिन के सामने ही राष्ट्र स्वतन्त्र हुआ। अभी उसके विकास की प्रक्रिया चल रही थी। सत्ताधारी व्यक्तियों में वैचारिक मतभेद रहता। वे आपस में झगड़ते भी थे। इससे देश की प्रगति में बाधा उत्पन्न होती थी।

नेताओं की कलह ने एक दिन भयंकर रूप ले लिया। तब फ्रैंकलिन ने सीनेट में खड़े होकर कहा- 'बन्धुओं, हमें चाहिए कि एक साथ मिलकर फांसी पर लटक जायें, अन्यथा अलग-अलग लटकना पड़ेगा।'

उबाऊ तथ्य

किसी ने आइंस्टाइन से प्रश्न किया-'ध्वनि का वेग क्या है?'

उनका उत्तर था-'मैं ऐसे तथ्यों से मस्तिष्क को नहीं उबाता जो विश्वकोश में प्राप्त हैं।'

टेलीफोन नंबर

आइंस्टाइन के एक मित्र ने उन्हें अपना टेलीफोन नंबर बताया-24361, और यह सोचकर कि नंबर याद रखने में आइंस्टाइन को कठिनाई होगी, उसे एक कागज़ पर लिख देना चाहा।

आइंस्टाइन ने उन्हें रोकते हुए कहा-'इसकी जरूरत नहीं है। नंबर मुझे याद रहेगा-दो दर्जन और 19 का वर्ग।'

मनहूस संख्या

गणना के क्षेत्र में अब एक भारतीय प्रतिभा का कमाल देखिए। गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजन् अस्पताल में थे। उन्हें देखने के लिए टैक्सी में बैठकर प्रोफेसर जी. एच़. हार्डी अस्पताल गए। उनकी गाड़ी का नम्बर था 1729। बातों के सिलसिले में हार्डी ने कहा कि यह तो बड़ी मनहूस संख्या है। बात यह है कि यूरोप में 13 अशुभ अंक माना जाता है और 1729 के गुणन खंड में यह संख्या एक बार ($1729 = 7 \times 13 \times 19$) अवश्य आती है।

इस पर रामानुजन् तपाक से बोले–'नहीं–नहीं, यह तो बड़ी मनोरंजक संख्या है। यह सबसे छोटी संख्या है जो दो घनों के योग के रूप में दो विभिन्न तरीकों ($12^3 + 1^3$ और $10^3 + 9^3$) से प्रकट की जा सकती है।'

वास्तव में रामानुजन् की गणितीय प्रतिभा विलक्षण थी। उन्हें 'गणितज्ञों का गणितज्ञ' कहा जाता है।

नंबर याद रखने का तरीका

महान रूसी वैज्ञानिक प्योत्र कैपित्जा ने प्रारम्भ में कैंब्रिज की कैवेंडिश प्रयोगशाला में प्रख्यात वैज्ञानिक लार्ड रदरफोर्ड के साथ कार्य किया। कैवेंडिश प्रयोगशाला में उन्होंने जो शोध किए, सभी निम्न ताप की घटनाओं से संबंधित थे।

बाद में वह मास्को के भौतिकी संस्थान में कार्य करने लगे। कैपित्जा संस्थान में रोज अपना कोट एक निश्चित नंबर की खूंटी पर ही टांगते थे। एक दिन संस्थान के अध्यक्ष ने देखा कि उन्होंने कोट टांगने के बाद खूंटी पर से नंबर नहीं उठाया। अतः उन्होंने कैपित्जा से पूछा–'क्या आप नंबर नहीं भूल जायेंगे?'

कैपित्जा बोले-'नहीं, मैं हमेशा 273 नम्बर पर अपना कोट टांगता हूं।' वास्तव में सेल्सियस पैमाने में यह परम शून्य तापक्रम है।

कुछ दिनों बाद, संस्थान आने पर उन्होंने देखा कि उस नंबर पर पहले से ही चार-पांच कोट टंगे हुए हैं। शायद कुछ और लोगों को कैपित्जा का नंबर याद रखने का तरीका पसंद आ गया था। अतः वे परेशान हो गए और खड़े-खड़े सोचते रहे कि अब क्या किया जाय। उनकी परेशानी पास खड़े एक वैज्ञानिक ने हल की। उसने सुझाया-'आप 524 नंबर पर अपना कोट क्यों नहीं टांगते?'

वास्तव में फारेनहाइट पैमाने में यह भी परम शून्य तापक्रम है। और इस तरह कैप्तिजा की समस्या सुलझ गयी।

गुत्थी सुलझाओ या नोबेल पुरस्कार लौटा दो!

बात सन् 1958 की है। जार्ज डब्ल्यू. वीडल को आनुवंशिकी में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए नोबेल पुरस्कार की घोषणा की गई। उनके पास बधाई के अनगिनत पत्र आने लगे। मगर बधाई का एक ऐसा तार आया कि वीडल चक्कर में पड़ गए। यह विचित्र तार भेजा था प्रसिद्ध विषाणु विज्ञानी मैक्स डेलब्रुक ने। यह तार अंग्रेजी के 4 अक्षरों- A, B, C, D के 41 त्रिकों (तीन-तीन अक्षरों के समूह) में बनाकर भेजा गया था, जो इस प्रकार था—

ADB	ACB	BDB	ADA	CDC	BBA	BCB	CDA
CDB	BCA	BBA	ADC	ACA	BDA	BDB	BBA
ACA	ACB	BBA	BDC	CDB	CCB	BDB	BBA
ADB	ADA	ADC	CDC	BBA	DDC	ACA	ADB
BDB	BDA	BBA	CCA	ACB	CDB	ADC	BDB
BBA							

तार को पढ़ने में वीडल को सिर के बल कसरत करनी पड़ी। फिर भी इसका कोई मतलब वह नहीं निकाल सके। इस काम में उनकी सहायता की उनके वनस्पतिज्ञ मित्र डेविड स्मिथ ने। उन्होंने तार का अध्ययन करके बताया कि इस तार की भाषा में BBA एक ऐसा 'अक्षर-त्रिक है' जो कि हर शब्द के अंत को दर्शाता है। इस तरह बधाई के तार का पहला शब्द पांच अक्षरों का, दूसरा शब्द चार अक्षरों, तीसरा चार अक्षरों, चौथा दो अक्षरों, पांचवां चार अक्षरों, छठा चार अक्षरों, सातवां पांच अक्षरों और आठवां शब्द पांच अक्षरों का बना होना चाहिए।

बड़ी माथा-पच्ची के बाद वीडल ने तार को पढ़ा। कूट भाषा में तार था: 'BREAK THIS CODE OR GIVE BACK NOBEL PRIZE' यानी 'कूट की गुत्थी सुलझाओ या नोबेल पुरस्कार लौटा दो।'

अब बारी वीडल की थी। उन्होंने स्वनिर्मित कूट भाषा में बधाई संदेश का उत्तर डेलब्रुक को भेजा। इसको भी पढ़ने के लिए डेलब्रुक को अन्य लोगों की मदद लेनी पड़ी थी।

हंसने की वजह

आइंस्टाइन को वायलिन बजाने का बड़ा शौक था। एक बार वे अपने कुछ खास मित्रों की एक बैठक में वायलिन बजा रहे थे। संयोग से प्रसिद्ध प्रहसन-लेखन फ्रैंक मोलनर भी वहां उपस्थित थे और वह हंस रहे थे। आइंस्टाइन ने बीच में ही वायलिन बजाना रोक दिया और मोलनर से कहा-'जब मैं बजा रहा हूं तो आप क्यों हंस रहे हैं? मैं तो आपके नाटकों के बीच में कभी नहीं हंसता।'

सनक

फ्रैंकलिन के मन में जाने क्यों यह बात घर कर गई कि खुले बदन पर्याप्त मात्रा में ठंड का सेवन किया जाय तो स्वास्थ्य के लिए काफी लाभप्रद है। इस आरोग्य-लाभ के लिए वह जाड़ों में तड़के उठकर सीलन भरे कमरे में नंगे शरीर दस मिनट घूमा करते। रात में उनके सोने के कमरे में चार बिस्तरे बिछे रहते। एक बिस्तर पर लेटे-लेटे जब वह शरीर के ताप से गरम हो जाता तो दूसरे बिस्तर पर चले जाते और इस तरह रात भर कई बार बिस्तर बदलते।

वजह

प्रो. प्रशांतचंद्र महलनबीस भारत के प्रसिद्ध सांख्यिकीविद् थे। हाजिर-जवाबी में भी उनका कोई सानी नहीं था। एक बार किसी ने कहा-'आप जैसे सांख्यिकी विशेषज्ञ के रहते योजना आयोग के बहुत से अंदाज गलत कैसे निकले?'

प्रो० महलनबीस ने उत्तर दिया-'बात दरअसल यह थी कि हमने कम्प्यूटरों की मदद ली थी।'

संदेश

प्रसिद्ध आनुवंशिकीविद् डॉ. हरगोविन्द खुराना भारतीय मूल के वैज्ञानिक हैं। वैसे, अब वे अमेरिकी नागरिक हैं। 1974 में जब वे भारत आए थे, तो आकाशवाणी के एक संवाददाता ने उनसे युवा पीढ़ी के लिए संदेश मांगा।

डॉ. खुराना ने माइक में बोलते हुए कहा-'कड़ी मेहनत करो।'

उनके इस संक्षिप्त वक्तव्य से संवाददाता बहुत निराश हुआ। जब उसने खुराना से कहा कि यह संदेश प्रसारण के लिहाज से बहुत छोटा है तो वे बोले-'अच्छा हम कहते हैं कि उनको कड़ी मेहनत करनी चाहिए।'

एक लाख डालर : असली दावेदार कौन?

सबसे पहले मार्टन ने ईथर का प्रयोग संवेदनाहारी के रूप में किया था। परन्तु हारेस वेल्स स्वयं इसका श्रेय लेना चाहता था। वेल्स का दावा था कि ईथर का विचार उसी ने मार्टन के सामने रखा था, जब वे दोनों साथ काम करते थे। परन्तु वेल्स को इसमें सफलता नहीं मिली। यूं हारेस वेल्स अच्छा चिकित्सक था पर उसके अंदर चारित्रिक दृढ़ता की कमी थी। एक बार उसने दो लड़कियों के ऊपर तेजाब फेंक दिया था। इस जुर्म के लिए उसे जेल जाना पड़ा। जेल से लौटकर उसने आत्महत्या कर ली।

इसी बीच मार्टन ने कचहरी में अमेरिकी कांग्रेस पर इस बात के लिए दावा किया कि ईथर की खोज के लिए पुरस्कार-स्वरूप 1,00,000 डालर की राशि उसे मिलनी चाहिए। लेकिन एक सीनेटर ने कहा

कि यह राशि क्रॉफोर्ड लौंग को मिलनी चाहिए। साथ ही जैकसन नामक एक अन्य चिकित्सक ने भी इस राशि को पाने के लिए कचहरी में दावा किया। हालांकि जैकसन जानता था कि यह राशि उसे मिलने वाली नहीं, पर उसका ध्येय यह था कि यह पुरस्कार मार्टन को भी न मिले। और पुरस्कार मार्टन को मिला भी नहीं।

जब जैकसन को पुरस्कार न मिला तो उसने एक और नया पैंतरा बदला। अब उसने वेल्स की विधवा पत्नी का पक्ष लेना शुरू किया। फिर न जाने क्या हुआ कि एकाएक वह क्रॉफोर्ड लौंग के पक्ष में बोलने लगा। कुल मिलाकर मामला बहुत ही पेचीदा होता गया और परिणाम यह हुआ कि पुरस्कार किसी को भी नहीं मिला। जैकसन बाद में पागल हो गया। मार्टन तो हताश-निराश होकर अपना मानसिक संतुलन ही खो बैठा और 39 वर्ष की अल्पायु में निर्धनता की हालत में एक पार्क की बेंच पर मरा हुआ पाया गया।

क्लोरोफार्म के अनुभव

ईथर की ही तरह क्लोरोफार्म भी संवेदनाहारी के रूप में प्रयुक्त होता है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग डॉ. सिम्पसन ने किया था। हालांकि इसकी खोज 1831 में ही हो चुकी थी, पर शल्य क्रिया में इसका उपयोग 1847 के नवंबर मासांत में ही आरम्भ हुआ। सबसे पहली बार क्लोरोफार्म के गुणों की बात कैसे प्रकाश में आयी, इसका भी किस्सा बड़ा दिलचस्प है।

डॉ. सिम्पसन के घर पर डॉ. कीथ और मैथ्यूस डंकन बैठे हुए गपशप में मशगूल थे। सिम्पसन के पास बहुत दिनों से थोड़ी-सी क्लोरोफार्म एक शीशी में पड़ी हुई थी। आज उन्हें इसके प्रयोग करने का ख़याल आया। तीनों मित्रों ने उस शीशी को नाक पर लगाकर ठीक से सूंघा। थोड़ी ही देर में उसने अपना कमाल दिखाया। वे तीनों अधिक वाचाल हो गए। एक बार तीनों ने फिर उसे सूंघा और इस बार बेहोश होकर इधर-उधर लुढ़क गए। पास बैठी महिलाएं पहले तो इसे एक मनोरंजक खेल समझती रहीं, लेकिन जब काफी देर तक भी किसी को होश न आया तो वे चिंतित हो उठीं। उनकी चिंता तब दूर हुई जब सबसे पहले डॉ. सिम्पसन ने आंखें खोलीं और अपने अन्य दोनों साथियों की ओर देखा। मैथ्यूस डंकन कुर्सी के नीचे पड़ा था और कीथ मेज के नीचे पड़ा हुआ अपने पैर चला रहा था। इससे डॉ. सिम्पसन को पक्का यकीन हो गया कि क्लोरोफॉर्म एक अच्छा संवेदनाहारी सिद्ध हो सकता है।

रातभर क्लोरोफॉर्म का प्रयोग चलता रहा। इस प्रयोग के ठीक ग्यारह दिन बाद सिम्पसन ने शल्यक्रिया में क्लोरोफॉर्म का प्रयोग आरंभ कर दिया। वास्तव में आपरेशनों में इससे बड़ी मदद मिली। क्लोरोफॉर्म

की खोज से पहले मरीजों के हाथ-पैर बांध दिये जाते अथवा कई आदमी मिलकर उसे पकड़े रहते और आपरेशन के समय उसके करुण-विलाप से वातावरण बड़ा भयावह और त्रासद बन जाता। निस्संदेह चिकित्सा जगत के लिए क्लोरोफार्म वरदान ही साबित हुआ। वस्तुत: संवेदनाहारी की खोज का सर्वाधिक श्रेय डॉ. जेम्स यंग सिम्पसन को ही है।

अनूठा द्वंद्व

पुराने जमाने में किसी समय यूरोप में एक विचित्र-सा रिवाज था। यदि दो आदमियों के बीच किसी बात को लेकर तकरार आगे बढ़ जाती तो उनमें से कोई भी द्वंद्व-युद्ध की चुनौती दे देता था। इसे स्वीकारना स्वाभिमान की बात समझी जाती थी और इससे मुकर जाना तौहीन और हार।

एक बार ऐसी ही मुसीबत में बेचारे लुई पाश्चर फंस गए। हुआ यह कि फ्रांस के किसी कुलीन व्यक्ति को लगा कि पाश्चर ने उनका अपमान कर दिया है, अत: उसने द्वंद्व-युद्ध की चुनौती उन्हें दे दी। मजबूरन पाश्चर को चुनौती स्वीकारनी पड़ी।

पाश्चर मूर्खतावश अपनी जान खोना नहीं चाहते थे। अत: उन्होंने कहा-'चूँकि चुनौती मुझे दी गई है, इसलिए हथियार चुनने का अधिकार मेरा है। ये हैं दो बोतलें। एक में पानी है और दूसरे में हैजे के जीवाणुओं का घोल है। यदि मेरे प्रतिद्वंद्वी किसी एक बोतल का द्रव पी लेते हैं तो दूसरी बोतल का द्रव मैं पी जाऊंगा।'

पाश्चर की वह शर्त सुनकर उनका प्रतिद्वंद्वी ठंडा पड़ गया। वह समझ गया कि सारा खेल पाश्चर के बुद्धि-चातुर्य का है। फलत: उसने अपनी चुनौती वापस ले ली।

द्वंद्व में नाक कटा दी

पाश्चर ने किसी तरह द्वंद्व-युद्ध की मुसीबत से छुटकारा पा लिया था पर प्रख्यात खगोलज्ञ टाइको ब्राहे को तो अपनी नाक कटानी पड़ी।

एक भोज में किसी बात पर एक आदमी से उनका झगड़ा हो गया। बात द्वंद्व-युद्ध तक जा पहुंची। फिर क्या था, दोनों ने अपनी तलवारें खींच लीं। रात का अंधेरा था। ब्राहे के प्रतिद्वंद्वी ने जो तलवार चलायी कि दुर्भाग्यवश उससे ब्राहे की नाक ही कट गयी।

सुना जाता है कि इसके बाद ब्राहे ने सोने और चांदी के मिश्रण की एक नकली नाक बनवा ली थी। नाक प्राय: गिर जाती थी, अत: उसे जोड़ने के लिए वे अपने पास हमेशा सीमेंट की एक डिबिया रखते थे।

शुक्रवार को बारिश नहीं होगी

एक बार एक समाजसेवी महिला आइंस्टाइन को अपने घर आमंत्रित करने जा पहुंची। आइंस्टाइन को अपने यहां बुलाने का उसका उद्देश्य यह था कि समाज में उसकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी, लोगों पर दबदबा पड़ेगा।

संयोग ऐसा था उस समय पूरे सप्ताह तक आइंस्टाइन के पास समय बिलकुल नहीं था। अत: उन्होंने उससे माफी मांग ली और अपनी व्यस्तता की मजबूरी बतायी।

महिला ने कहा–'कितनी लज्जास्पद बात है, आपके पास मेरे लिए समय नहीं है। खैर, शुक्रवार की शाम को तो आप आ ही सकते हैं!'

'शुक्रवार को?' आइंस्टाइन ने धैर्यपूर्वक उत्तर दिया–'मुझे उस दिन माउंट विल्सन वेधशाला जाना है। मैं डॉ. माइकेल्सन के साथ तारे देखूंगा।'

महिला ने बड़े उत्साह से प्रतिवाद किया–'आजकल बारिश हो रही है। हो सकता है, शुक्रवार को तारे निकलें ही नहीं। बेहतर होगा, आप मेरा निमंत्रण स्वीकार कर लें।'

'नहीं, नहीं। उस दिन बारिश नहीं होगी। डॉ. माइकेल्सन ने उसे मना कर दिया है।' – व्यंग्य के लहजे में आइंस्टाइन ने जवाब दिया।

एक नहीं, दो मत

यों तो एडिसन अपने प्रयोगों में ही उलझे रहते, मगर सार्वजनिक जीवन में वह अत्यन्त स्पष्टवादी थे। एक बार उनके मित्र एवं मोटरकार के जनक हेनरी फोर्ड अमेरिका के राष्ट्रपति पद के लिए खड़े हुए। फोर्ड के बारे में सीनेट के कुछ सदस्यों ने एडिसन की भी राय जाननी चाही।

एडिसन की दो टूक राय थी–'फोर्ड को राष्ट्रपति बनने के लिए मैं अपनी राय नहीं दे सकता। हां, औद्योगिक विशेषज्ञ के रूप में मेरे एक नहीं, दो मत उनके पक्ष में हैं।'

सख्त मेहनत

एडिसन ने किन्हीं सज्जन को बातचीत के दौरान बताया कि मैं प्रतिदिन बीस घंटे काम करता हूं।

इस पर वे सज्जन बोले–'तभी तो आपने इतनी जबर्दस्त सफलता प्राप्त की है। वास्तव में हर सफलता के पीछे सख्त मेहनत छिपी होती है।'

एडिसन ने कहा– 'बेशक!' और तभी उनकी नजर सड़क के किनारे खड़े एक बूढ़े आदमी की ओर गई, जो खोमचा लगाये बेच रहा था। देखने में वह बहुत ही गरीब लग रहा था। एडिसन ने उसकी ओर संकेत करते हुए कहा–'मगर असफलता के पीछे और भी सख्त मेहनत छिपी होती है।'

बेचारे की उम्र ही कितनी?

डॉ. बीरबल साहनी विनोदी भी कम न थे। एक बार डॉ. बोशी सेन उनकी प्रयोगशाला में पधारे। डॉ. सेन उन दिनों पानी में पाये जाने वाले एक सूक्ष्म पौधे (एजोला पिन्नाटा नामक फर्न) पर काम कर रहे थे। उन्होंने डॉ. साहनी से पूछा–'आपके पास एजोला होंगे?'

'क्यों नहीं?' डॉ. साहनी ने कहा और अपने जीवाश्म संग्रहालय में से एजोला का जीवाश्म नमूना तुरंत ला दिया और बड़ी मायूसी से बोले–'बेचारा, अभी केवल छह करोड़ वर्ष का ही तो हुआ है!'

कीमती सिर

जब हिटलर तानाशाह बना तो उस समय आइंस्टाइन अमेरिका की यात्रा पर थे। हिटलर के बर्बर अत्याचारों से ऊबकर उन्होंने निर्णय लिया कि वे अब जर्मनी नहीं लौटेंगे। जर्मन अखबारों ने इस खबर को खूब उछाला। अखबारों ने सुर्खियों में छापा-'आइंस्टाइन की ओर से शुभ-समाचार........वे जर्मनी वापस नहीं आ रहे......!' इस खबर को सुनकर हिटलर आगबबूला हो उठा। उसके आदमियों ने उनका घर तहस-नहस कर डाला। बैंक में जमा उनका सारा पैसा जब्त करा लिया गया। इतना ही नहीं, उसने उनके सिर पर एक हजार पौंड का इनाम भी रखा।

जब आइंस्टाइन को इनाम की खबर मिली तो हंसकर उन्होंने कहा कि मुझे क्या मालूम कि मेरा सिर इतना कीमती है।

गणितज्ञ सहायक

महान गणितज्ञ होने के बावजूद आइंस्टाइन को अपने गणित पर पूरा भरोसा नहीं था। जब वे बर्लिन में थे तो एक अंग्रेज़ लेखक और चित्रकार सर विलियम रोथेन्स्टाइन ने उनका एक चित्र बनाया। जिस कमरे में बैठकर आइंस्टाइन चित्र बनवाते थे, उसी के एक कोने में एक और आदमी बैठा रहता था। प्राय: वह किसी समस्या में भी उलझा रहता था और बीच-बीच में अपना सिर झटकता रहता था।

एक दिन जब रोथेन्स्टाइन से नहीं रहा गया तो उन्होंने आइंस्टाइन से उस आदमी के बारे में पूछ ही लिया। आइंस्टाइन ने सहज भाव से बताया-'वह मेरा गणित-सहायक है। मेरे सिद्धांतों और गणनाओं की वह जांच कर रहा है। आप तो जानते हैं-मैं अच्छा गणितज्ञ नहीं हूं।'

मितव्ययता की शानदार परम्परा

कैंब्रिज विश्वविद्यालय से सम्बद्ध 'कैवेन्डिश भौतिक प्रयोगशाला' प्रतिभाशाली वैज्ञानिकों की नर्सरी (नर्सरी ऑफ जीनियस) नाम से विख्यात है। मितव्ययता इस प्रयोगशाला का सर्वोपरि सिद्धांत रहा है। यह संसार की सबसे सस्ती प्रयोगशालाओं में से एक है। उपलब्ध सामग्री से जोड़-जोड़कर अपने उपकरण तैयार करना और शोध करना इस प्रयोगशाला की परम्परा रही है। इससे सम्बद्ध अधिकांश वैज्ञानिक नोबेल पुरस्कार पा चुके हैं। रदरफोर्ड, चैडविक, थामसन, कैपित्सा आदि इसी की उपज हैं।

बात सन् 1930 के आस-पास की है। उस समय लार्ड रदरफोर्ड इसके अध्यक्ष थे। एक दिन वह रिशी काल्डर (जिन्हें बाद में लोक-विज्ञान लेखन के लिए प्रख्यात 'कलिंग पुरस्कार' भी मिला था) को प्रयोगशाला दिखा रहे थे। उनके साथ एक संभ्रांत अमेरिकी सज्जन थे। उन्होंने एक कोने में गंभीर मुद्रा में उल्टी साइकिल के पैडिल चलाती एक आकृति को देखा। साइकिल में पिछला पहिया नहीं था और उससे एक डायनमो चल रहा था। जैसे ही वे लोग उस आकृति के पास से गुजरे, उसने लार्ड रदरफोर्ड से पूछा-'प्रोफेसर, आप मुझे मोटर कब दिला रहे हैं?'

रदरफोर्ड बोले-'किसी भी दिन। मेरा खयाल है, अब मैं पैसे इकट्ठा कर लूंगा और मोटर के लिए आर्डर दे दूंगा।'

आगे कुछ बढ़ जाने पर रदरफोर्ड ने काल्डर से कहा-'आप जानते हैं, ये कौन हैं? ये हैं नोबेल पुरस्कार विजेता लार्ड एस्टन।'

यह बात अमेरिकी सज्जन को बहुत विचित्र महसूस हुई। उन्होंने मोटर खरीदने के लिए 50 डालर देने हेतु तुरंत जेब में हाथ डाला किन्तु कुछ सोचकर उन्होंने अपना खाली हाथ बाहर निकाल लिया। उन्हें लगा कि ऐसा करने से कैवेंडिश की अल्प व्यय में युग-प्रवर्तक आविष्कार करने की स्वस्थ परम्परा नष्ट हो जायेगी और यही सोचकर वे चुप लगा गए।

यह भी ठीक, वह भी ठीक

आइंस्टाइन अपने कमरे में बैठे किसी गूढ़ चिन्तन में डूबे थे। उनकी पत्नी ने नये नौकर की शिकायत करते हुए कहा-'ऐसे बेकार नौकर को तत्काल निकाल देना चाहिए।'

अपने विचारों में डूबे आइंस्टाइन ने कहा-'ठीक है।' और अपने काम में लगे रहे।

इतने में उनका नौकर आया और उनकी पत्नी की शिकायत करने लगा—'प्रोफेसर, आपकी पत्नी तो असभ्य हैं।'

इस पर भी उन्होंने कहा-'ठीक है।' और अपना काम करते रहे।

बाहर बरामदे में बैठी उनकी पत्नी ने सुनकर झल्लाते हुए शिकायत की-'प्रोफेसर, तुम पागल तो नहीं हो गए? तुम नौकर के सामने मेरा अपमान कर रहे हो?'

फिर भी उन्होंने उसी विश्वास से कहा-'ठीक है।' और पहले की भांति अपना काम करते रहे।

अब नौकर और उनकी पत्नी, दोनों ने एक-दूसरे को अर्थपूर्ण ढंग से देखा और मुसकराकर रह गए।

निकल भागने की ताक में

आविष्कारक एडिसन को सभा-समारोहों में भाग लेने से बड़ी चिढ़ थी। मजबूरन एक घनिष्ट मित्र का आग्रह वह टाल न सके। वहां बहुत से लोग आए थे। वे कुछ परेशान-से हो उठे। तभी उनके मेजबान का ध्यान उधर गया।

मेजबान बोले-'अरे, आप यहां खड़े हैं? आइये, बैठिए! हां, आजकल आप किस खोज में लगे हैं?'

'फिलहाल तो मैं यहां से निकल भागने की ताक में हूं।'

शोफर की विद्वता

आइंस्टाइन का सापेक्ष-सिद्धांत शीघ्र ही बातचीत का आम विषय बन गया। उन्हें जगह-जगह से व्याख्यान देने का बुलावा आता। हालत यह थी कि उनके व्याख्यान सुन-सुनकर उनके शोफर (कार-चालक) तक को वह सिद्धांत शब्दश: रट गया था।

एक दिन शोफर ने कहा कि मैं भी सापेक्षवाद पर आपका भाषण दोहरा सकता हूं।

आइंस्टाइन ने कहा-'ठीक है, अगले भाषण-स्थल पर लोग मुझे नहीं पहचानते। तुम ही वहां भाषण देना, मैं गाड़ी में तुम्हारी जगह बैठूंगा।'

विश्वविद्यालय में शोफर का स्वागत हुआ। उसने पूरे विश्वास के साथ भाषण दिया। एक श्रोता ने सापेक्षवाद से संबंधित एक प्रश्न पूछा। उसने तुरंत जवाब दिया-'बड़ा घटिया सवाल है। इस प्रश्न का उत्तर तो मेरा शोफर भी दे सकता है।'

शोफर को बुलाया गया। उसने आते ही प्रश्न का ठीक-ठीक उत्तर दे दिया। सभी बुद्धिजीवी श्रोतागण शोफर (आइंस्टाइन) की विद्वत्ता पर मुग्ध और आश्चर्यचकित हुए बिना न रह सके।

अनभिज्ञता

एक बार आइंस्टाइन अपने पुराने अध्यापक को आदर देने के लिए उनके घर चले गए। जैसी उनकी आदत थी, वे अपने सादे, बिना प्रेस किए हुए कपड़ों में ही उनके घर में जा पहुंचे।

इसका असर जानते हैं, क्या हुआ? अध्यापक ने उनको पहचानने से साफ इनकार कर दिया। भिखमंगे के सिवा उन्हें उसने और कुछ नहीं समझा।

मॉडल

आइंस्टाइन के सापेक्षवाद ने चारों ओर धाक जमा दी। फलत: उनसे मिलने वालों की भीड़ लगी रहती। व्यापारीगण उनसे अपने सामानों का नाम उनके नाम पर रखने की अनुमति मांगते।

फोटोग्राफर, चित्रकार उनका फोटो उतारने या चित्र बनाने की ताक में रहते। कुछ लोग तो आटोग्राफ लेने के लिए उन्हें घेरे रहते। लेकिन सबसे ज्यादा चिढ़ उन्हें चित्रकारों से थी। एक दिन किसी चित्रकार ने उनसे पूछा–'आजकल आप क्या कर रहे हैं?'

आइंस्टाइन ने सहज ढंग से उत्तर दिया–'फिलहाल, मैं चित्रकारों के लिए 'मॉडल' का कार्य कर रहा हूं।'

आइंस्टाइन सरीखा

एक बार आइंस्टाइन समुद्री जहाज़ से यात्रा कर रहे थे। एक व्यंग्यकार ने बैठे-बैठे उनका स्केच बना डाला। स्केच बना चुकने के बाद उसने आइंस्टाइन की ओर उसे बढ़ाकर उस पर हस्ताक्षर करने का निवेदन किया।

आइंस्टाइन थोड़ी देर तक उस स्केच को देखते रहे और फिर उस पर यह टिप्पणी लिख दी:

'यह मोटा-ताजा सूअर सरीखा जो दिखता है, प्रोफेसर आइंस्टाइन सरीखा ही लगता है।'

पुस्तक की भूमिका

एक नये लेखक ने अपनी एक पुस्तक में बर्ट्रेंड रसेल के असंख्य उदाहरण शामिल कर लिये और उन्हीं से उसकी भूमिका भी लिख देने का आग्रह किया।

पांडुलिपि का अवलोकन करने के बाद रसेल ने उस लेखक से कहा–'श्रीमन्, मुझे अपनी प्रशंसा करने में लज्जा आती है।'

मेहमान या मेजबान?

एक बार आइंस्टाइन अपने किसी मित्र के यहां रात्रि-भोज पर आमंत्रित थे। भोजनोपरांत बातचीत करते-करते काफी देर हो गई। मेजबान भला कैसे कहता कि आप अब जाएं। पर उसने संकोच करते हुए इतना कहा—'मित्रों के साथ बातचीत करने में समय कितनी जल्दी बीत जाता है।'

आइंस्टाइन ने जेब से घड़ी निकाल ली। फिर बातें प्रारम्भ हो गईं और घंटों बीत गए। मेजबान को झपकी आने लगी। उसने संकोच में कहा-'मेरा खयाल है, समय काफी हो गया है। अब आपको आराम करना चाहिए।'

इस पर आइंस्टाइन तपाक से बोल उठे-'आप जाएं, तब न मैं आराम करूं!'

इतना सुनने पर मेजबान ने स्पष्ट किया कि यह उसी का घर है, आप अतिथि हैं तो वह चौंककर बोले-'मैं तो इसे अपना घर समझकर अब तक इसी सोच में बैठा था कि आप जायें, तब मैं भी आराम करूं।'

लक्ष्य से कितनी दूर?

राबर्ट गोडार्ड राकेट विज्ञान के पितामह थे। वस्तुत: उन्हीं के प्रयासों की बदौलत अंतरिक्ष अभियान सपना न रह सका। राकेटों के प्रयोग का यह प्रारंभिक दौर था। उन्होंने अपना राकेट छोड़ा, जो 90 फुट ऊंचा उठकर 171 फुट की यात्रा साढ़े 18 सेकंड में करके लौट आया।

उनकी इस महान सफलता की सराहना करना तो दूर, अखबारों ने उनका मजाक ही उड़ाया। 'न्यूयार्क टाइम्स' ने इस खबर को शीर्षक दिया-'चंद्र राकेट अपने लक्ष्य से केवल 2,38,799.50 मील पीछे रहा।'

इतना ही नहीं, गोडार्ड को सरकारी ज़मीन पर परीक्षण करने की जो अनुमति दी गई थी, अब वह भी रद्द कर दी गई। तो यह था उस महान आविष्कार का पुरस्कार!

फिर आया 21 जुलाई, 1969 का दिन। नील आर्मस्ट्रांग सकुशल चांद पर उतरे। महान स्वप्नद्रष्टा गोडार्ड का सपना पूरा हुआ। पर यह सुखद क्षण देखने के लिए गोडार्ड हमारे बीच नहीं थे। 10 अगस्त, 1945 को ही उनकी मृत्यु हो गई थी। मानव के चंद्र-अवतरण के साथ 'न्यूयार्क टाइम्स' ने अपने प्रथम पृष्ठ पर स्व. गोडार्ड के नाम सार्वजनिक क्षमायाचना छापी और महान आविष्कारक को श्रद्धांजलि अर्पित की।

नाम के पीछे दुम

जगदीश बसु के प्रयोगों की चर्चा सारी दुनिया में हो गई। फिर तो उनको मिलने वाले सम्मानों की बाढ़ लग गई। सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाओं से उन्हें उपाधियां और अलंकरण मिले। जब ब्रिटिश सरकार ने उन्हें सी. आई. ई. ('कंपेनियनशिप ऑफ दि इंडियन एंपायर' अर्थात् 'भारतीय साम्राज्य की सहचारिता') की उपाधि प्रदान की तो उन्होंने अपने मित्र रवीन्द्रनाथ टैगार को एक पत्र में लिखा-'मेरे नाम के पीछे अब एक दुम लग गयी है।'